
चन्दामामा
मां-बच्चों का मासिक पत्र
8



[गताङ्क से आगे]

राजा ने ज्योतिषियों को बुलवाकर पूछा-"आप लोगों ने, जब मेरा लड़का पैदा हुआ था, बताया था कि उसमें कोई अशुभ लक्षण नहीं हैं, उसके कारण कोई अनिष्ट नहीं होगा। मेरा लड़का कतई बावला है, बहरा है, गूङ्गा है। आपकी बातें बिल्कुल झूठी थीं। अब क्या कहते है?"

"आपने कई व्रत उपवास करके यह पुत्र पाया था। इसलिये खुशियाँ मना रहे थे। उन खुशियों में हम कैसे कहते कि यह अभागा है? इसलिये हमने आपको झूठ बतलाया था।" ज्योतिषियों ने कहा।

"अगर यह बात है तो अब क्या किया जाये?" राजा ने पूछा।

"महाराज! यदि यह बालक जीवित रहा या तो आप पर, नहीं तो महारानी पर नहीं तो राज्य पर, आपत्ति आकर रहेगी। इसलिये अशुभ रथ में अशुभ लक्षणवाले घोड़ों को जोतकर, उसमें इस बालक को बिठाकर पश्चिमी द्वार से शमशान ले जाकर, वहाँ उसे गड़वा दीजिये।" ज्योतिषियों ने सलाह दी।

राजा ने वैसा ही करने के लिए कहा। यह सुन चन्द्रादेवी ने राजा से कहा-"आपने कहा था कि आप मुझे एक वर देंगे। अब वह वर दीजिये।"

राजा मान गया। "यह बात है तो मेरे लडके का राज्याभिषेक करवाइये।" रानी ने कहा। "यह नहीं हो सकता। तेरे लड़के की जन्मपत्री अच्छी नहीं है।" राजा ने कहा।

"भले ही वह सारे जीवन भर राज्य न करे, उसे कम से कम सात वर्ष राज्य



नहीं है। उठो और घूमो फिरो।" उसे बहुत मनाया समझाया पर तेमिय न हिला-डुला।

इसप्रकार छः दिन बीत गये। राजा ने अपने सारथी, सुनन्द को बुलाकर आज्ञा दी। कल शाम तक एक अशुभ-रथ में अशुभ लक्षणवाले घोड़ों को जोत कर, उसे तैयार रखो। उसमें तेमिय को बिठाकर पश्चिम द्वार से श्मशान ले जाओ। वहाँ एक गढ़ा खोदकर उसमें उसे गाड़कर, स्नान करके, वापिस चले आओ।

करने दीजिये।" रानी ने कहा। राजा ने कहा कि यह नहीं हो सकता। आखिर राजा यह मान गया कि तेमिय सात दिन राज्य करे।

चन्द्रादेवी ने तुरन्त अपने लड़के को उचित वस्त्र और आभरण पहनाये। सारा नगर सजाया गया और यह घोषणा कर दी गई कि उस दिन से महाराजा तेमिय का परिपालन प्रारम्भ हो गया था।

रात भर, चन्द्रादेवी ने अपने लड़के के पास बैठकर कहा-"बेटा! मैने तेरे कारण इन सोलह सालों से आँखें नहीं मूँदी हैं। रोते रोते मेरी आखें सूज गई हैं। मुझे मालूम है तू बावला

अन्तिम रात्र आई। चन्द्रादेवी ने अपने लड़के के ऊपर गिर कर कहा-"राजा ने तेरी मृत्यु की आज्ञा दे दी है। कल तेरी आयु खतम हो जायेगी, बेटा!"

यह सुनते ही बोधिसत्व बहुत खुश हुये। "जो तपस्या मैंने सोलह साल से की थी। वह अब सफल होने जा रही है।" उन्होंने सोचा। यह जानते हुये भी कि माँ का दिल दहल रहा था, तो भी उन्होंने किसी प्रकार की उसे सान्त्वना न दी।

सवेरे होते ही, सारथी सुनन्द ने रथ तैयार कर, रानी से कहा-"मालकिन,

आप तो जानती हैं राजाज्ञा का पालन करना ही होगा।" चन्द्रादेवी अपने लड़के को पकड़कर रोने लगी। सारथी ने आसानी से तेमिय को उठाकर रथ में रख दिया। यह सोचकर कि वह पश्चिमी द्वार की ओर जा रहा था वह पूर्वी द्वार की ओर चला।

पूर्वी द्वार से निकलकर तीन योजन जाने के बाद रथ रुका। वहाँ सुनन्द को एक जङ्गल दिखाई दिया और उसको भ्रम हुआ कि उसके पास श्मशान था। वह तुरन्त रथ से उतरा। तेमिय के आभूषणों को एक तरफ रख, गढ़ा खोदने लगा।

"सोलह वर्षों से, जो अवयव हिले डुले न थे, अब उनको काम मिला है, यह सोच बोधिसत्व खड़े होकर, अपने हाथ रगड़ने लगे। रथ से उतरकर इधर उधर चलकर भी देखा। यह देखने के लिए उनमें कितना बल है, उन्होंने पीछे से रथ को उठाकर देखा। वह फूल के गुच्छों की तरह उठ गया।

फिर उन्होंने गढ़ा खोदते सुनन्द से पूछा-"क्यों भाई, क्यों यों गढ़ा खोद रहे हो? क्या बात है?"



महाराजा का लड़का बावला है, गूँगा है, बहरा है। अपाहिज है। इसलिये गढ़ा खोदकर उसको गाड़ना है।" सुनन्द ने बिना पीछे देखे ही कहा।

"ठीक तरह देख। न में अपाहिज हूँ। न बहरा ही हूँ। तुम मुझे गाढ़ कर बहुत बड़ा पाप कर रहे होगे।" बोधिसत्व ने कहा। सारथी पीछे मुड़ा। राजकुमार को देखकर हैरान रह गया।

"आप कौन है? आपका नाम क्या है? आपके पिता का नाम क्या है?" उसने पूछा।



"यदि मैं आपको वापस ले गया तो आपके पिताजी, माताजी और प्रजा खुश हो कर मुझे न मालूम क्या क्या ईनाम देंगे।" सारथी ने कहा।

"अरे पागल। अब मुझे किसी की खुशी से वास्ता नहीं है। आज मेरी तपस्या पूरी हुयी है। मेरा जन्म सफल हुआ है। मैं पूर्ण मानव बन गया हूँ।" बोधिसत्व ने कहा।

"तो फिर आपने इतने दिन यह क्यों दिखाया कि आप गूँगे हैं, बहरे हैं?" सारथी ने पूछा। "कभी मैंने राज्य किया था। उसके बाद मुझे नरक भुगतना पड़ा। यह जानकर कि मुझे फिर राजा बनना पड़ेगा मेरा मुख बन्द हो गया। मेरे सामने ही मेरे पिता ने चार को बड़ा कठिन दण्ड दिया। उसके बाद मेरे कान बन्द से हो गये। मैं बावला-सा हो गया। जब यह कोई जान गया हो कि यह जीवन पानी के बुलबुले की तरह है, दुखमय है, क्या दूसरों पर क्रोध करेगा? क्या इसके लिए दूसरों को दण्ड देगा? इतना सा सत्य जाने बगैर लोग अज्ञान में पड़े रहते हैं?" बोधिसत्व ने कहा।

बोधिसत्व ने सच कहा। पर सारथी विश्वास न कर पाया। उसने रथ के पास जाकर देखा कि उसमें न राजकुमार था, न उनके आभूषण ही। वह असलियत जान गया। उसने बोधिसत्व के पैरों पर पड़कर कहा-"महाराज! अगर यही बात है तो इस जङ्गल में आने की क्या जरूरत है? चलिये, नगर ही चलिये। आराम से राज्य कीजिये।"

"मैं, राज्य और वैभव नहीं चाहता। उनके लिए, जाने मुझे कितने ही पाप करने पड़ेंगे।" बोधिसत्व ने कहा।

सारथी ने कहा-"महाराज, मुझे भी अपने साथ आने दीजिये।"

"यह नहीं होगा। यह रथ राजा का है। उसे राजा को दे दो। जो कुछ तुम्हें लेना देना है, वह सब कर लो। फिर सन्यास ग्रहण करो।" बोधिसत्व ने कहा।

यह सोचकर कि उसके नगर जाते ही राजकुमार जङ्गल चला जायेगा, सारथी ने कहा-"स्वामी! तो आप बचन दीजिये कि मेरे वापस लौटने तक आप यहीं रहेंगे। राजा को में साथ ले आऊँगा। वे आपको देखकर बहुत प्रसन्न होंगे।" बोधिसत्व ने वचन दिया कि उसके वापस आने तक वे वहीं रहेंगे। सारथी उनकी चरणधूलि लेकर चल दिया।

रथ को खाली आता, अपनी खिड़की से देख, रानी चन्द्रादेवी जोर से रो पड़ी। सारथी को बुलाकर पूछा-"क्यों, क्या मेरे लड़के ने अन्तिम क्षण में भी मुख से कोई बात नहीं कही? उसने हाथ पैर नहीं हिलाये?" "मालकिन! वे बहरे और गूङ्गे कहाँ है? राज्य करने के भय से उन्होंने



इसका ढोङ्ग किया था। वे हमारी तरह जीना नहीं चाहते थे। वे एक दिव्य मार्ग पर जा रहे हैं। आप स्वयं देख लेंगी।" यह कहकर सारथी ने जो कुछ गुज़रा था कह सुनाया। रानी के दुख भरे आँसु आनन्दाश्रु हो गये। उसने यह बात तुरन्त राजा से कही।

राजा बहुत से लोगों को लेकर अपने लड़के को देखने चला। उसके पहुँचने से पहले, इन्द्र ने विश्वकर्मा को बोधिसत्व के लिए एक अच्छी पर्णशाला बनाने के लिए कहा। राजा, इसी पर्णशाला के पास ही गया।

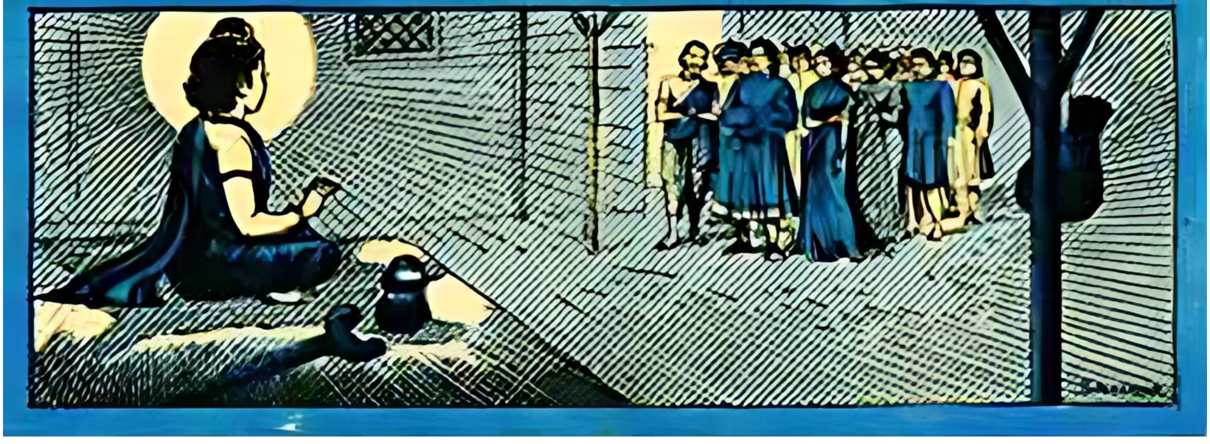
बोधिसत्व ने, पिता के लिए एक आसन रखवाया। पर राजा, पुत्र के प्रति गौरव के कारण नीचे बैठ गया। उसने अपने लड़के को जैसे तैसे वापस ले जाना चाहा। इसलिए उसने कहा-"बेटा! तुम्हारे लिए यह पर्णशाला क्यों? सख्त जमीन पर क्यों सोते हो? कन्दमूल खाने की क्या जरूरत है? कितने ही महल हैं, कितने ही दास दासी हैं.... राज्य है! आओ और आराम से राज्य करो।"

"जो आप सुख बता रहे हैं, वे सब नश्वर हैं। मेरा उनसे कोई सम्बन्ध नहीं है। हम राज्य और सिंहासनों के विषय में सोचते ही रहते हैं। एक हमारे लिये प्रतीक्षा करती रहती है, एक अपना काम करता जाता है और एक हमारी ताक में रहती है। पहला है, बुढ़ापा दूसरा काल। तीसरी मृत्यु है।" बोधिसत्व ने कहा।

"ये बातें सुनकर मुझे जीवन से घृणा-सी होने लगी है। मुझे राज्य नहीं चाहिये। मैं तपस्या करूँगा। तुम मेरे बदले राज्य करो।" राजा ने कहा।

जब मैंने सब कुछ छोड़ दिया है, तो इस राज्य की क्या जरूरत है?" बोधिसत्व ने कहा। वहाँ एकत्रित व्यक्तियों को जीवन के परमार्थ के बारे में उपदेश देने लगे। उनका उपदेश सुनने सारा नगर आया। कालक्रम से सबने सन्यास ले लिया और नगर उजड़-सा गया।

यह सुनते ही कि काशी के राजा ने सन्यास ग्रहण कर लिया है एक और राजा उनके पास आया। उसके साथ उसकी प्रजा भी आई। उन सबने सन्यास ले लिया। इस तरह तीन राज्य उजड़ गये। वहाँ के जन्तु सब जङ्गली जानवर हो गये। उन नगरों की सम्पत्ति का मूल्य मिट्टी का भी न रहा।





[१३]

[पिङ्गल के भाइयों ने पैसा तो आपस में बाँट लिया; पर उन दोनों में जादू के थैले के बारे में झगड़ा हो गया। यह बात राजा को जब मालूम हुई तो उसने उन दोनों को जेल में दलवा दिया। पिङ्गल वाले जहाज और एक और जहाज में बीच समुद्र में युद्ध शुरू हो गया। कप्तान ने गुलामों को छोड़कर उन्हें हथियार दिये। बाद में]

कप्तान की आज्ञा के अनुसार जञ्जीरों में बन्धे गुलाम छोड़ दिये गये। उनमें से हरेक को तलवार, भाले दे दिये गये। उस समय कप्तान ने जाने कहाँ का प्रेम दिखाते हुये कहा-"तुम इस समय से गुलाम नहीं हो। योद्धा हो। हमारा जहाज़ खतरे में है। अगर हम उस जहाज के आदमियों के आधीन हो गये, जो हमें पकड़ने की कोशिश कर रहे हैं, हमें जिन्दगी भर उनकी गुलामी करनी होगी। और अगर हम जीत गये तो सब आराम से जीवन व्यतीत कर सकेंगे। इसलिये प्राण रक्षा के लिए, स्वतन्त्रता के लिए, जी जान से लड़ो।"

कप्तान की बात पर गुलामों को विश्वास न हुआ। उनमें से हरेक को याद था, कि उसने उन पर कैसे कैसे जुल्म ढाऐ थे, किस क्रूरता से उन पर अत्याचार किया



था। परन्तु उस मौके पर उन्हें क्या करना चाहिये था। दुश्मन का जहाज पास आता जाता था। उसमें से निरन्तर बाण और बिस्फोटक पदार्थ उनके जहाज पर गिर रहे थे। अगर उनका जहाज जल जला गया तो जहाज के साथ वे भी जलमग्न हो जायेंगे।

ये सन्देह, जो गुलामों के दिलों में बुलबुला रहे थे, पिङ्गल के मन में भी उठ रहे थे। परन्तु तुरन्त उसने एक निश्चय कर लिया। यह जरूरी था कि जहाज को डूबने से बचाया जाय। परन्तु क्रूर कप्तान का जीते रहना खतरनाक था। पहले उसका काम तमाम करना होगा। फिर मौका देखकर शत्रु जहाज के व्यक्तियों से सुलह-समझौता करके अपनी राह पर जाना होगा।

पिङ्गल ने यह सोचकर साथ के गुलामों को भी बताया कि क्या करना चाहिये था। उसने उनसे कहा कि शत्रु पोत की बात बाद में सोची जा सकती है, पहले अपने जहाज के कप्तान और उसके समर्थकों को समाप्त करने में हमारा भला है। सब गुलाम इसके लिए मान गये। युवक, बुद्धिमान, साहसी पिङ्गल को उन्होंने अपने सरदार के रूप में स्वीकार किया।

पिङ्गल झट, भयङ्कर आवाज़ में गरजता हुआ-"कप्तान, और उसके आदमियों को मार दो। चलो " आगे बढ़ा।

गुलाम सब एक साथ कप्तान और उसके साथियों पर तलवार लेकर कुदे, जो उन्हें तरह तरह से सताते आ रहे थे। कप्तान ने अनुमान न किया था कि परिस्थिति इतनी विषम हो जायेगी। उस समय उसी के जहाज के गुलामों ने उस पर तलवार खींची।



कप्तान के पास सोचने के लिये समय न था। इससे पहले कि वह अपने साथियों से कुछ कहता, गुलाम उसके टुकड़े टुकड़े कर रहे थे।

"बलवा, धोखा, पहले इन गुलामों को यम के पास पहुँचाओ।" कप्तान यह कहता गुलामों पर कूदा। बलवान कप्तान ने चुटकी भर में पाँच छः गुलामों को तलवार का शिकार बना दिया। यह देख कई गुलाम डर के कारण पीछे हट गये।

पिङ्गल यह खतरा ताड़ गया। तुरन्त वह तलवार लेकर कसान की ओर बढ़ा। उसने गुलामों से कहा- "कप्तान को एक क्षण में अपनी तलवार का बलि दूँगा। अगर तुम मौत से डर कर भागे भी तो समुद्र तुम्हें अवश्य निगलकर रहेगा। अपनी स्वतन्त्रता के लिए निर्भय होकर लड़ो।"

पिङ्गल की बात सुनकर भागते गुलामों का ढाढस बँधा। इस बीच, सिंह की तरह गरजता वह कप्तान का मुकाबला करने लगा। उसकी पहली चोट के कारण पिङ्गल की तलवार कप्तान के सीने को चीरती हुयी निकल गई। कप्तान "जय भैरवी" चिल्लाता, सीने पर हाथ रखकर, आँखे लाल कर पिङ्गल पर तलवार लेकर झपटा।

कप्तान का बल, तलवार चलाने में निपुणता देख पिङ्गल तुरन्त एक तरफ़ हट गया। कप्तान की चोट पिङ्गल तक न पहुँची। उसका पैर पास पड़ी रस्सी में फँस गया और वह आगे गिर गया। इस तरह पिङ्गल को अच्छा मौका मिला। उसने जोर से चिल्लाते हुये कप्तान की पीठ में तलवार गाड़नी चाही। परन्तु कसान, खतरा जानकर एक तरफ लुढ़क गया।

पिङ्गल की तलवार वहाँ पड़े शहतीर पर जा लगी और उसके फौरन दो टुकड़े हो गये।

कप्तान ने अट्टहास किया। "ओहो! शायद तुम गुलामों के सरदार हो। सरदार कैसी आफत में फँस गया है! हम तलवार से तेरे टुकड़े टुकड़े करके तुझे समुद्र में फेंक देंगे। फिर तेरे साथियों को....।"

कप्तान गुस्से से अन्धा था। वह यह न देख सका कि पिङ्गल क्या कर रहा था। तलवार टूटते ही जान गया था कि वह खतरे में था। दूसरी तलवार कहीं आस पास न थी। उसके साथी गुलाम, कप्तान के साथियों से लड़ रहे थे।

पिङ्गल, बिजली की तरह लपका और उसने पास पड़ी एक रस्सी ले ली। उससे एक फन्दा बनाया। कप्तान का मुकाबला करने के लिए तैयार हो गया। जब कप्तान, मानों गुस्से के नशे में आगे बढ़ा तो पिङ्गल ने हाथ की रस्सी घुमा फिराकर उसके गले में डाल दी। फन्दा कस दिया। तुरन्त पिङ्गल रस्सी लपेटता पीछे की और भागा।



कप्तान, हाय हाय करता सामने की और गिरकर अपने हाथ की तलवार से रस्सी को काटने का प्रयत्न करने लगा। यह देख, पिङ्गल ने पीछे मुड़कर अपने साथियों को बुलाया। तुरन्त दो गुलाम भागे भागे आये। कप्तान को नीचे पड़ा देख, उस पर लपक कर, उसे तलवारों से उन्होंने बुरी तरह मारा।

जब तक कप्तान मर न गया तब तक पिङ्गल यह न जान सका कि उसके चारों और क्या हो रहा था। वह एक गुलाम के हाथ से तलवार लेकर जहाज के उस कोने में गया जहाँ लड़ाई हो रही थी। उसके वहाँ गये थोड़ी देर ही हुई थी कि या तो कप्तान के साथी मारे गये, नहीं तो जख्मी किये गये, नहीं तो पकड़ लिये गये। वे पूरी तरह जीत गये थे।

इस बीच, शत्रु जहाज के सैनिक, कोलाहल करते पिङ्गल के जहाज़ के पास आ रहे थे। वे लगातार बाण छोड़ते जाते थे। वे सोच रहे थे कि उनके दुश्मन जहाज में कोई दङ्गा शुरू हो गया था और उसे पकड़ने का यही अच्छा मौका था।





उसने निश्चय किया कि पहले अपने जहाज में सफेद झण्डा उठाया जाय। फिर सन्धि करके अपने अपने रास्ते चला जाना ही श्रेयस्कर था।

पिङ्गल ने सोचा कि शत्रु पोत से अपने जहाज़ को दूर रखा जाय, शत्रु को जहाज में न आने दिया जाय और समझौता चलाया जाय। तुरन्त उसकी आज्ञा के अनुसार मस्तूल पर सफेद झण्डा फहराया गया। उसी समय शत्रु-पोत से विजय ध्वनि सुनाई पड़ी।

पिङ्गल न सोच सका कि क्या किया जाय! उस शत्रु पोत का सामना करना उसके थोड़े से साथियों की बस की बात न थी और अगर उनके सामने घुटने टेक भी दिये तो वे उन्हें फिर पकड़ सकते हैं और उनको गुलाम बना सकते हैं। शत्रु-पोत में आखिर सैनिक कितने हैं? वह सहसा कुछ निर्णय न कर पाया।

पिङ्गल ने कप्तान की दुर्बीन छीनकर उससे शत्रु-पोत की ओर देखा। जहाज़ में नाविक भरे पड़े थे। पिङ्गल जान गया कि उनसे लड़ने से कोई फायदा न था।

पिङ्गल ने भोपा लेकर चिल्ला चिल्लाकर, शत्रु पोतवालों को वह सब बताया जो उसके जहाज में गुज़रा था।

"तुम्हारे जहाज के रास्ते में आकर उसको पकड़ने का हममें से किसी ने प्रयत्न न किया था। हम गुलामों ने जालिम कप्तान और उसके साथियों को मार दिया है। हम अब सिर्फ यही चाहते हैं कि हम अपने जहाज को एक चन्दरगाह में ले जायें और वहाँ से अपने अपने देश चले जायें। इसलिए आप हमारे काम में दखल न दीजिये और हम आप से यह प्रार्थना करते हैं कि आप अपने रास्ते

चले जायें। हम पर आक्रमण न कीजिये।" पिङ्गल ने कहा।

यह सुनते ही शत्रु-पोत में खलबली मच गई। कुछ देर बाद भयङ्कर अवाज़ में यह सुनाई दिया।

"तुम गुलामों को समुद्र में जहाज चलाने का हक नहीं है। इसके अलावा, मालिक और उसके साथियों को मारकर तुमने एक अक्षम्य अपराध किया है। इसके लिए तुम्हें दण्ड भुगतना ही पड़ेगा। नहीं तो तुम्हारी देखा देखी हमारे जहाज के गुलाम भी एक दिन बलवा कर सकते हैं और हम सब को मार सकते हैं। तुम जहाज़ का लङ्गर उतारो। बिना कुछ कहे हार मान लो।"

यह सुनकर पिङ्गल हैरान रह गया। वह यह जान गया कि वह व्यापारी जहाज न था, अपितु ड़ाकुओं का ही जहाज था। यह बात साफ थी कि अगर उन्होंने उनके सामने हार मान ली तो उन सब को फिर गुलाम बनना होगा। फिर से पशु का जीवन व्यतीत करना होगा।



एक दो शब्दों में पिङ्गल ने अपने साथियों को सारी स्थिति समझा दी। उनमें से हर कोई लड़ने के लिए तैयार था। उन्होंने एक कण्ठ से जवाब दिया कि फिर गुलाम होने से तो अच्छा समुद्र में डूबकर मरना था। गुलामी बुरी है। मौत ही भली।

तुरन्त मस्तूल पर से सफेद झण्डा उतार दिया गया। जहाज में जय जय की ध्वनि प्रतिध्वनित होने लगी। अगर शत्रु, जो संख्या में बहुत अधिक थे; उनके जहाज़ में आ गये तो वे कुछ न कर सकते थे। इसलिए जितनी दूर सम्भव हो, उतनी दूर रह कर बाणों से

युद्ध करने और आवश्यकता पड़ने पर अपने जहाज को उस जहाज से टकराने का पिङ्गल ने निश्चय किया।

फिर युद्ध शुरू हो गया। पिङ्गल के साथी, शत्रु-पोत पर बाण छोड़ने लगे। पिङ्गल ने यह भी सोचा कि लड़ते लड़ते ही, यदि हो सका, तो वह अपने जहाज को दूर ले जायेगा। परन्तु थोड़ी देर में नही यह मालूम हो गया कि शत्रु-पोत से दूर भागना सम्भव न था। देखते देखते, बहुत वेग से शत्रु-पोत से एक नौका आने लगी। शत्रु सैनिक, उत्साहपूर्वक नारे लगाते चिल्ला रहे थे।

पिङ्गल ने झट एक निश्चय किया। वह यह था, विजय या स्वर्ग । इसके अतिरिक्त कोई और रास्ता न था। उसने साथियों को आज्ञा दी कि जहाज को जोर से चलाकर शत्रु-पोत से टकरा दें। जहाज़ आगे को बढ़ा। पहले तो उन्हें आश्चर्य हुआ। फिर पिङ्गल की चाल समझकर, शत्रु सैनिक भय से काँपने लगे। हाय हाय करने लगे।

जहाज को पीछे ले जाने की कोशिश की, पर वे सफल न हो सके। पिङ्गल तलवार हाथ में लेकर अपने साथियों से जल्दी जहाज़ को टकराने के लिए कह रहा था। देखते देखते जहाज तेजी से आगे बढ़ा और शत्रु-पोत से टकरा गया। झट मानों हजारों गलों से आर्तनाद निकला। समुद्र गूँज उठा। दोनों जहाजों के टकराने से पिङ्गल अपनी जगह से उछाल दिया गया और वह समुद्र में जा गिरा।

(अभी और है)



भक्त और दार्शनिक



विक्रमार्क ने जिद न छोड़ी। वह फिर पेड़ के पास गया, पेड़ से शव उतारकर कन्धे पर डालकर चुप चाप श्मशान की ओर चला। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा! इस अन्धेरी रात के समय तुम बहुत कष्ट उठा रहे हो। तेरी थकान मिटाने के लिए एक छोटी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कहानी सुनानी शुरु की।

किसी जमाने मे सुबुद्धि नाम का एक दार्शनिक रहा करता था। सिवाय दर्शन के उसको किसी चीज में दिलचस्पी न थी। उसने शादी भी न की थी। काशी में ही रहा करता। दर्शन ग्रन्थों का अध्ययन करता और स्वयं भी ग्रन्थ लिखता।

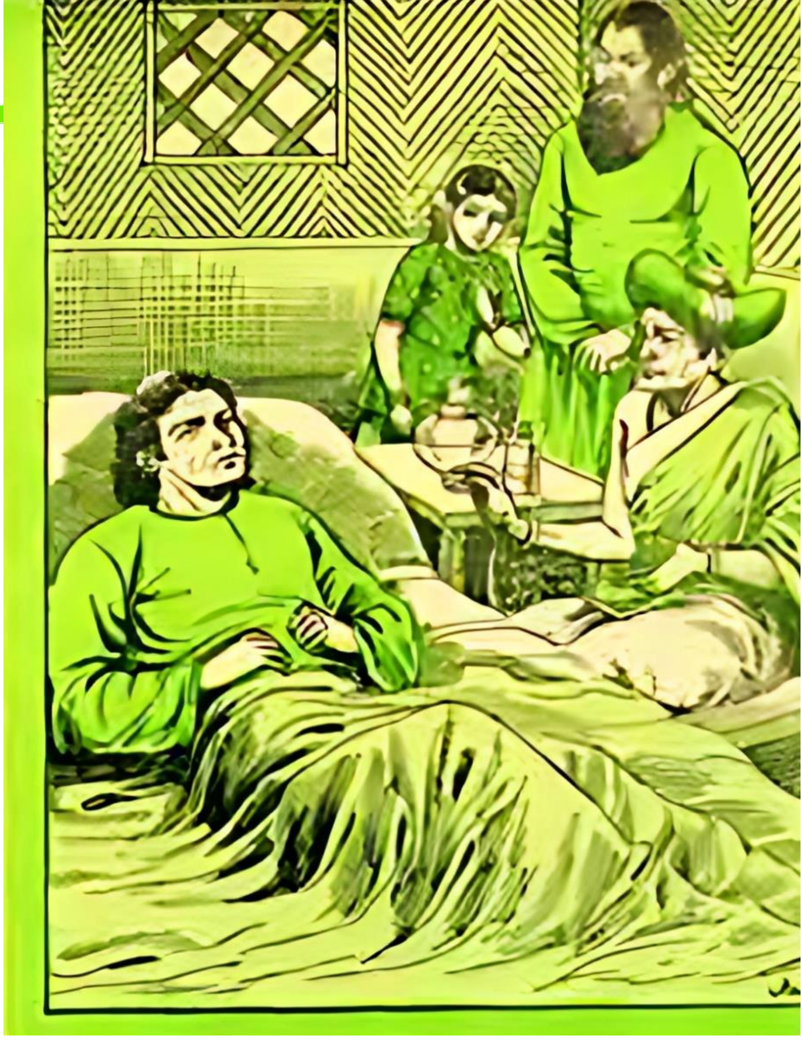
बङ्ग देश से कृष्णदास नाम का एक व्यक्ति अपनी लड़की के साथ काशी आया। कुछ

दिन पहले ही कृष्णदास की पत्नी गुजर गई थी। उसकी अस्थियाँ गङ्गा में मिलाने के लिए वह अपनी लड़की के साथ आया था। वह और उसकी लड़की सुबुद्धि के घर के पासवाली धर्मशाला में ठहरे।

कृष्णदास जिस काम पर आया था, वह खतम हो गया। वह घर जाने को तैयार हो रहा था कि उसे यकायक कोई बीमारी हो गई। धर्मशाला में चिकित्सा की कोई सुविधा न थी। सुबुद्धि को यह पता लगा। उसने धर्मशाला में जाकर उससे कहा कि वह अपनी लड़की के साथ उसके घर में रहे और अपना इलाज करवाये। उसने वैसा ही किया।

सुबुद्धि ने एक वैद्य को बुलवाया। उसकी दवा ने कृष्णदास पर अच्छा असर किया। थोड़े दिनों में ही बीमारी कम होने लगी।

इस बीच सुबुद्धि ने कृष्णदास और उसकी लड़की सुगुणा के बारे में बहुत कुछ मालूम कर लिया था। कृष्णदास बहुत बड़ा भक्त था। वह हमेशा भगवान का ध्यान करता रहता। सुगुणा को पिता पर बहुत प्रेम था। उसका स्वभाव बहुत अच्छा था। सुबुद्धि ने कभी स्वप्न में भी न



सोचा था कि वैसी स्त्रियाँ भी इस संसार में थी। उस सुबुद्धि ने भी जिसने कभी गृहस्थी न चाही थी, सोचा क्या अच्छा होता अगर उसके भी सुगुणा जैसी लड़की होती।

कृष्णदास जबसे थोड़ा बहुत उठने-बैठने लगा था, तभी से प्रार्थना ध्यान वगैरह करने लगा था।

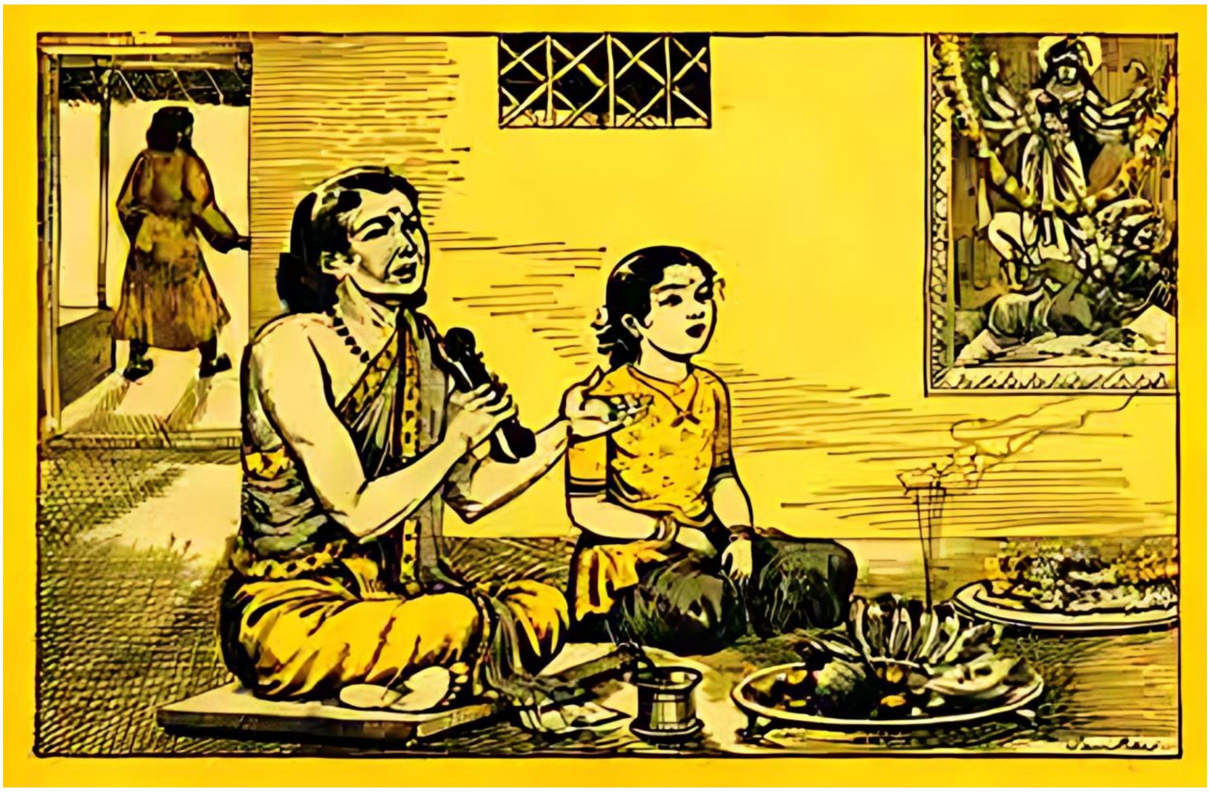
"भगवान की मुझ पर कितनी ही कृपा है। अगर उसकी कृपा हम पर न हो तो हमारे जीवन क्या हो जायेंगे। इस महान सृष्टि में हमारा अस्तित्व ही कितना है! हमारे जीवन तभी सार्थक हो सकते

हैं, जब कि भगवान की हम पर कृपा हो। मेरी पत्नी का निधन मेरे लिये कितना ही बड़ा धक्का है। पत्नी और लड़की के सिवाय इस संसार में मेरा और कोई नहीं है। ईश्वर की अनुकम्पा थी, तभी मैं उसकी मृत्यु के दुःख को झेल सका। उसी ने मुझे शक्ति दी।" कृष्णदास ने कहा।

कृष्णदास जब इस प्रकार की बातें करता और पिता पुत्री जब मिलकर प्रार्थना करने लगते तो किसी न किसी बहाने सुबुद्धि घर से बाहर चला जाता।

पहले कृष्णदास को सुबुद्धि का व्यवहार कुछ समझ में न आया। परन्तु बाद में पता लगा कि वह नास्तिक था। उसे ईश्वर में विश्वास न था। उसने अपनी लड़की से कहा- "बेटी, यद्यपि यह सुबुद्धि नास्तिक है तो भी बड़ा योग्य है। नास्तिकों में योग्य हैं और अयोग्य भी। ऐसे भी कई नास्तिक हैं, जो बहुत ज्ञानी हैं। यह बात मैने कई बार देखी है।"

सुबुद्धि कृष्णदास से साधारण विषयों पर बातचीत किया करता। दर्शन पर कभी भूलकर भी कुछ न कहता। परन्तु



कृष्णदास अपनी भक्ति के बारे में प्रायः कुछ न कुछ कहता रहता।

"मुझे और मेरी लड़की को सङ्गीत का बड़ा चाव है। आपने बताया कि आपको सङ्गीत पसन्द नहीं है। भक्ति भी कुछ ऐसी है। उसका आनन्द जो जानते हैं, उसके बगैर वे अपना जीवन व्यर्थ समझते हैं।" कृष्णदास कहा करता।

परन्तु इसप्रकार की चर्चा से सुबुद्धि में कोई परिवर्तन न हुआ।

एक दिन कृष्णदास ने सुबुद्धि से कहा-"ईश्वर की कृपा से मैं फिर स्वस्थ हो गया हूँ। हम अब अपने गाँव चले जायेंगे। आज्ञा दीजिये।"

"अभी आप यात्रा करने लायक तन्दुरुस्त नहीं हुये हैं। थोड़ा बल आने पर जा सकते हैं।" सुबुद्धि ने कहा।

"नहीं, जाना ही होगा। हमारे गाँव वाले मेरी प्रतीक्षा में रोज गिन रहे होंगे।" कृष्णदास ने कहा।

"आपका इस हालत में अकेला जाना, मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है। चलिये, मैं भी आपके साथ चलता हूँ। मैं रास्ते में आपकी मदद तो कर ही सकूँगा, इस तरह





मैं बङ्गदेश भी देख लूँगा। मैंने कितने ही राज्य देखे; पर आपका देश अभी तक नहीं देखा है।" सुबुद्धि ने कहा।

इसके लिए पिता, पुत्री सहर्ष मान गये। कुछ दिन यात्रा करके वे तीनों कृष्णदास के गाँव पहुँचे।

यह जानकर कि कृष्णदास वापस आ गया है, कितने ही ग्रामवासी उसे देखने आये। आमवासियों का कृष्णदास के प्रति गौरव

आदर देखकर सुबुद्धि को बहुत आश्चर्य हुआ। पाँच दस ने उससे उसकी पत्नी की मृत्यु पर सहानुभूति प्रकट की।

"भाइयो, यह सब भगवान की दया है।" कृष्णदास ने उन सबसे कहा। इतने में शाम हो गई। भजन का समय हो गया।

"अगर आपको कोई आपत्ति न हो तो आप भी भजन में शामिल हो सकते हैं। नहीं तो इधर उधर टहल आइये। आपने सुगुणा को खुलकर गाते कभी नहीं सुना है। सुनना चाहें तो सुन सकते हैं।" कृष्णदास ने सुबुद्धि से कहा।

"अच्छा, मैं सुनूँगा, आप अपना भजन शुरु कीजिये।" सुबुद्धि ने कहा।

ग्रामवासियों ने भजन शुरू किया। सुगणा ने भी गाया। सब की आवाज में उसकी आवाज तम्बूरे के समान ऊँची और मधुर सुनाई दी। सुबुद्धि को भी, जिसको सङ्गीत कभी मधुर न लगा था, उसका गीत सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई।

थोड़े दिन वहाँ रहकर, सुबुद्धि काशी के लिए वापिस निकला।

"जब कभी आपको मौका मिले आप जरूर हमारे ग्राम आते रहिये। हम आपको रोज याद किया करेंगे।"

कृष्णदास और सुगुणा ने सुबुद्धि से यह कई बार कहा।

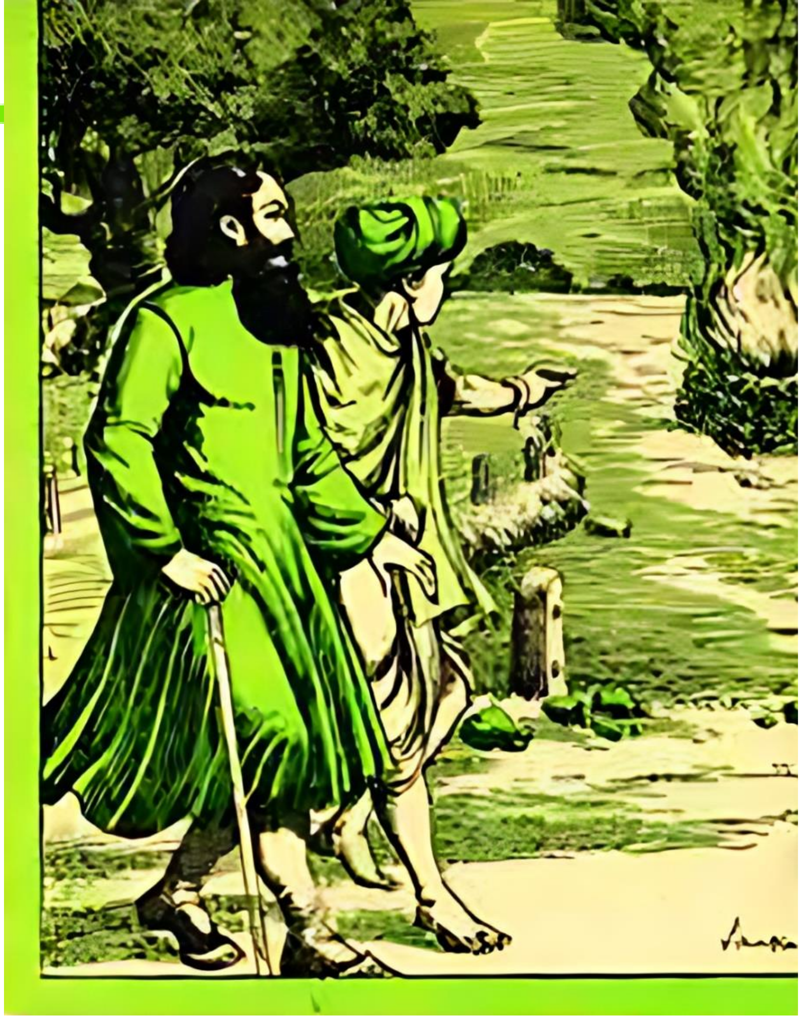
सुबुद्धि काशी वापस आ गया। सप्ताह और मास बीत गये। इस बीच उसको कई बार, कृष्णदास और सुगुणा को देखने की इच्छा हुई। पर यह सोचकर कि वह इच्छा अनुचित है, उसको दबाये रखा।

इतने में, सुबुद्धि को एक निमन्त्रण पत्र मिला। सुगुणा का विवाह होने वाला था। दुल्हा किसी राजा के यहाँ नौकर था। विवाह बहुत पहले ही तय हो चुका था। सुगुणा भी उसको बहुत चाहती थी।

यह निमन्त्रण पत्र मिलते ही सुबुद्धि निकल पड़ा। फिर सुगुणा को देखने जा रहा हूँ, यह सोचकर उसमें आनन्द का ज्वार-सा आ गया।

सुबुद्धि अभी कृष्णदास के गाँव पहुँचा न था कि अन्धेरा हो गया। पर सौभाग्यवश उस रास्ते एक और आदमी जा रहा था। उसने कहा कि वह उसे, उस गाँव तक पहुँचा देगा। ग्राम के श्मशान में उन्हें एक शव जलता दिखाई दिया।

"लगता है कोई मर गया है।" सुबुद्धि ने अपने साथ वाले से कहा।



"कृष्णदास की लड़की विचारी मर गई है। विवाह के बारे में बात तय हो गई थी कि इतने में खबर मिली कि वर मर गया है। यह खबर मिलते ही विचारी लड़की के हृदय की धड़कन बन्द हो गई और मर गई।" साथ के आदमी ने कहा।

सुबुद्धि का सिर चकरा गया। उसका हृदय भी रुक-सा गया। तैरता सा वह कृष्णदास के घर पहुँचा।

उसके चारों और ग्रामवासी बैठे थे। उनमें से कई रो रहे थे। कृष्णदास उनको

आश्वासन देता कह रहा था-"यह सब ईश्वर की कृपा है। हमारे हाथ में क्या है? रोना नहीं चाहिये।"

उसकी दृष्टि सुबुद्धि पर पड़ी। "अरे भाई आ गये? सुगुणा का विवाह हो गया। भगवान ने उसको अपने पास बुला लिया है।" उसने कहा।

सुबुद्धि अपना दुख न रोक सका। वह जोर जोर से सुगुणा के लिए रोने लगा। जब उसने यह सोचा कि वह कितनी प्रतीक्षा के बाद, कितने उत्साह से सुगुणा को देखने आया था तो उसका दुख और भी अधिक हो गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा- "राजा, मुझे एक सन्देह है। इतना दार्शनिक होते हुये भी सुबुद्धि क्यों रोया? वह कृष्णदास जो क्षण क्षण पर पत्नी और पुत्री का नाम लेता था क्यों नहीं रोया? अगर उत्तर जानबूझकर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"दर्शन को अगर आचरण में लाना है तो आदमी को अपने सहज स्वभाव को नष्ट करना होता है। परन्तु वह पूरी तरह नष्ट नहीं होता। कभी न कभी मौका पाकर वह संयम से बाहर हो ही जाता है। भक्ति ऐसी नहीं है। भक्त सब प्रकार के सुख अनुभव करता यह सोचता है कि वह सब भगवान की कृपा है। कष्ट भी झेलता है तो इस विश्वास से कि उन्हें भी भगवान ने दिया है। इस विश्वास से उनको झेलने की शक्ति आ जाती है। दार्शनिक में न सुख पाने की शक्ति होती है न कष्ट झेलने की ही। इसलिये दार्शनिक सुबुद्धि रोया और भक्त कृष्णदास नहीं रोया।" विक्रमार्क ने कहा।

राजा का इसप्रकार मौन भङ्ग होते ही, शव के साथ बेताल अदृश्य हो गया।





(गताङ्क से आगे)

इस बीच ड़ाकू अपनी गुफा में वापस गये। उनके आश्चर्य की सीमा न रही जब उन्होंने देखा कि कासिम का शव वहाँ न था। वे यह भी जान गये कि सोने की कुछ और थैलियाँ गायब थीं।

"लगता है हमारा रहस्य किसी ने मालूम कर लिया है। जिसको हमने मारा है, उसका कोई साथी होगा। वह ही शव और सोना ले गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। अगर हमने यह नहीं मालूम किया कि वह आदमी कौन है, हम पर जरूर आफत आयेगी। इसलिए तुममें से किसी अक्लमन्द को यात्री का वेष बनाकर शहर जाना होगा। यह मालूम करना होगा कि लोग, जिस आदमी को हमने मारा है उसके बारे में क्या कह रहे हैं। उसका पता, ठिकाना, नाम वगैरह क्या है मालूम करना होगा। अगर जानेवाले ने धोखा देना चाहा तो हम सब पर आफत आ सकती है। इसलिए जो इस काम पर भेजा जायेगा अगर वह बिना किये आया तो उसको मौत की सज़ा दी जानी चाहिये, यह मेरा ख्याल है।" डाकुओं के सरदार ने कहा।

इस विषय पर बात चलने से पहले, एक चोर ने आकर कहा-"यह शर्त मानकर में इस काम पर जाऊँगा। अगर मुझे औरों के लिए मरना भी पड़े तो मुझे कोई एतराज नहीं है।"

डाकुओं के सरदार और डाकुओं ने उसकी खूब प्रशंसा की। फिर उसने अपना वेश इस तरह बदल लिया कि उसे कोई पहचान न

श्री सुमन कुमार ओशी



सका। वह उसी दिन रात को निकल गया और बड़े तड़के शहर में पहुँच गया। जब वह गलियों में घूम-फिर रहा था तो उसे बाबा मुस्ताफा की दुकान दिखाई दी। दूसरों के दुकान खोलने से पहले अपनी दुकान खोलने की उसकी आदत थी।

बाबा मुस्ताफा तभी अपना काम शुरु करनेवाला था। डाकू दुकान में गया। बाबा मुस्ताफा को सलाम करके उसने कहा-"क्यों दादा! तुम्हें तो दिन में ही ठीक तरह नहीं दिखाई देता है, फिर सवेरे सवेरे ही क्यों काम शुरु कर दिया है? इस कम रोशनी में क्या तुम्हें कुछ दीखता है?"

"तुम मेरी बात नहीं जानते? मैं बूढ़ा हो गया हूँ; पर नज़र बिल्कुल ठीक है। और तो और मैंने इससे कम रोशनी में भी एक शव को सिया है।" बाबा मुस्ताफा ने कहा।

"शव को.....! " डाकू ने आश्चर्य का अभिनय करते हुये पूछा।

"हाँ, हाँ, यह न सोचना कि मैं सारी कहानी सुना दूँगा नहीं, में वह न करूँगा।" मुस्ताफ़ा ने कहा।

डाकू को विश्वास हो गया, जिस जानकारी की खोज में वह आया था, वह उस बूढ़े से प्राप्त की जा सकती थी। उसने एक सोने की दीनार बाबा मुस्ताफा के हाथ में रखते हुए पूछा-"दादा! तुम्हारे रहस्यों की मुझे क्या जरूरत है। तुम तो बावले से हो, भला मुझे कोई भी रहस्य बताने में क्या हानि है? मैं तो सिर्फ यह जानना चाहता हूँ कि यह शव तुमने किस घर में सिया था। वह मुझे दिखाओ, बस!"

"अगर मैं वह घर तुम्हें दिखाना भी चाहूँ तो भी मैं नहीं दिखा सकता। मुझे

एक जगह ले जाकर मेरी आँखें बाँध दी गई। फिर आँखें बन्द कर वहीं छोड़ गये। इसलिए वह घर तुम्हें मैं नहीं दिखा सकता।" बूढ़े ने कहा।

"मानों अगर तुम्हें उस जगह ले जाऊँ जहाँ तुम्हारी आँखें बन्द कर दी गई थी तो उस घर तक तुम जा सकोगे कि नहीं। यह करके तो देखो। तुम्हारा एहसान न रखूँगा, यह लो दीनार।" डाकू ने बाबा मुस्ताफा को दीनार दी।

बूढ़े ने दो मुहरों को बहुत देर तक देखा। वे उसे अच्छी लगीं। उन्हें जेब में उसने रखते हुए कहा-"कोशिश करूँगा, पर मैं वचन नहीं दे सकता।" बाबा मुस्ताफा डाकू को एक जगह ले गया। "यहीं मेरी आँखों पर पट्टी बाँधी गई थी। फिर मुझे इस तरफ ले जाया गया।" उसने कहा।

डाकू ने बूढ़े के आँखों पर अपना रुमाल बाँध दिया। फिर बूढ़ा डाकू को ठीक कासिम के घर ले गया, जैसे उसे सारा रास्ता ठीक ठीक याद हो। डाकू ने उस घर के दरवाजे पर निशान लगाकर बाबा मुस्ताफा की आँखें खोली। डाकू ने उससे पूछा-"जानते हो, यह घर किसका है?"



"मैं इस मोहल्ले में नहीं रहता, इसलिये मुझे नहीं मालूम।" बूढ़े ने कहा। अब चूँकि बूढ़े से कुछ मालूम न करना था, इसलिए डाकू उससे बिदा लेकर अपने साथियों से मिलने जङ्गल में चला गया।

डाकू और बाबा मुस्ताफा के चले जाने के बाद मोगियाना आई। वह किसी काम पर बाहर गई हुयी थी। उसने दरवाजे पर निशान देखा।

"यह निशान क्या हो सकता है। लगता है कोई मेरे मालिक का नुक्सान

करने की सोच रहा है। कुछ भी हो पहले बुरा सोचना अच्छा है, बजाय भले के।" यह सोच मोगियाना अन्दर गई और एक खडिया लेकर वह आस पास के घरों के किवाड़ों पर भी वैसा निशान लगा आई। यह उसने अलीबाबा को न बताया। इस बीच, डाकू अपने साथियों के बीच पहुँच गया....और अपनी सफलता की शेखी बघारने लगा, सबने उसको बधाई दी फिर चोरों के सरदार ने अपने आदमियों से कहा- "भाइयो! हमें देरी नहीं करनी चाहिये। वेश बदलकर, हथियार लेकर, हमें नगर में पहुँच जाना चाहिये। अगर हम सब मिलकर गये तो लोगों को शक होगा। इसलिये हम दो दो मिलकर जायें और शहर के चौक में मिलें और मैं और हमारा साथी, जो घर पर निशान लगाकर आया था, साथ जायेंगे और जाकर देखेंगे कि वहाँ क्या हालत है...... तब सब मिलकर सोचेंगे कि हमें क्या करना चाहिये।

डाकू दो दो की टोलियाँ बनाकर एक के बाद एक, भिन्न भिन्न रास्तों से शहर पहुँचे ताकि किसी को किसी प्रकार का



सन्देह न हो। सरदार और घर का निशान लगानेवाला डाकू, सब के बाद निकले और उस गली में पहुँचे, जहाँ अलीबाबा रहा करता था। मोगियाना ने जिन घरों पर निशान लगाया था, उन में से आखिरी घर देखकर डाकू ने कहा-"यहाँ वह घर है, जिस पर मैंने निशान लगाया था।"

"परन्तु इसके बगलवाले घर के किवाड़ पर भी इसी प्रकार का निशान लगा हुआ है।" ड़ाकुओं के सरदार ने कहा। वे इस दुविधा में थे कि उन दोनों में से कौन सा घर था कि उनको कई और घर भी दिखाई दिये, जिस पर वैसे ही निशान लगे हुये थे। वह डाकू घबरा गया, जिसने निशान लगाया था। उसने प्रतिज्ञा करके कहा कि वह एक घर के किवाड़ पर ही निशान लगाकर गया था। किसी और ने ये निशान लगाये होंगे।

ड़ाकुओं का प्रयत्न विफल रहा। चौक में वे और ड़ाकुओं से मिले। सरदार ने उन्हें बताया कि तब कुछ नहीं किया जा सकता था। वे सब मिलकर फिर जङ्गल में चले गये। जो ड़ाकू पर खोजने गया था उसने कहा कि उसे मृत्यु दण्ड दिया जाये।





उसका सिर धड़ से उड़ा दिया गया। उसका काम पूरा करने के लिए एक और साहसी सामने आया।

उसने जाकर बाबा मुस्ताफा को खूब घूँस दी और उससे वह घर मालूम कर लिया, जिसमें अलीबाबा रहा करता था। वह घर पर एक ऐसी जगह लाल निशान लगाकर चला गया, जो सबको आसानी से नहीं दीखता था।

मोगियाना की आँखें बहुत तेज़ थीं। उसने वह लाल निशान देख लिया। वह और घरों पर भी लाल निशान लगा आई।

ड़ाकुओं ने सोचा कि इस बार उनका काम चल जायेगा। पहली बार जैसे वे आये थे दूसरी बार भी उसी तरह शहर में पहुँचे ताकि किसी को कोई सन्देह न हो। जिस ड़ाकू ने लाल निशान लगाया था, उसको लेकर ड़ाकुओं का सरदार अलीबाबा की गली में गया। जब उन्होंने बहुत से घरों पर निशान देखा, तो वे निराश हो गये। वे कर ही क्या सकते थे? वे वापिस चले गये। क्योंकि इस बार भी उनका प्रयत्न असफल रहा था, इसलिए दूसरे चोर का भी सिर काट दिया गया।

जब दो दिलेर ड़ाकू इस तरह मारे गये तो सरदार ने सोचा कि इस तरीके से काम न बनेगा। इस बार वह स्वयं बाबा मुस्ताफा के पास गया। इस बार भी बाबा मुस्ताफा ने मदद की। उस बूढ़े की मदद से सरदार अलीबाबा के घर के सामने जा खड़ा हुआ। परन्तु उसने उस घर पर कोई निशान न लगाया। गली में इधर उधर घूम कर उसने अच्छी तरह याद कर लिया कि वह घर कहाँ था। फिर वह वापिस जङ्गल चला गया।

"आओ, इस बार मैं उस घर को अच्छी तरह देख कर आया हूँ। अब कोई गलती न होगी। हम अपना बदला निकाल सकेंगे। मैंने उसके लिए एक चाल सोची है। सुनो। अगर तुम में से किसी को इससे अच्छी चाल सूझे तो बताओ, सुनूँगा।" सरदार ने कहा। उसने अपनी चाल भी सुनाई। उसके साथियों ने उस चाल का आमोदन किया।

फिर ड़ाकू आस पास के गाँवों में गये। अट्ठारह खच्चर और अड़तीस चमड़े के थैले खरीदे गये। एक थैले में तेल डाल दिया। बाकी सेंतीस थैलों में सैंतीस ड़ाकू हथियार लेकर बैठ गये। ड़ाकुओं के सरदार ने उन थैलों के ऊपरवाले हिस्से में तेल डाला।

ड़ाकुओं के सरदार ने तेल के व्यापारी का वेश पहना। अड़तीस थैलों को अट्ठारह खच्चरों पर लादकर उन्हें हाँकता, अन्धेरे के समय शहर में पहुँचा और जब उन खचरों को हाँकता हाँकता अलीबाबा की गली में गया तो और भी अन्धेरा हो गया था। अलीबाबा भोजन करके घर के बाहर खड़ा खड़ा हवा खा रहा था।



ड़ाकुओं के सरदार ने अलीबाबा के पास नाकर कहा-"मैं तेल का व्यापारी हूँ। बहुत दूर से आ रहा हूँ। कल पेण्ठ में तेल बेच दूँगा। बहुत देर हो गई है। आज रात को कहाँ ठहरा जाय, कुछ मालूम नहीं। अगर आपको कोई दिक्कत न हो तो रात भर

मुझे अपने घर में रहने दीजिये। आपका उपकार कभी न भूलूँगा। अलीबाबा ने ड़ाकुओं के सरदार को जङ्गल में देखा था। आवाज भी सुनी थी। परन्तु वह उसको न पहचान सका-"इसमें क्या है! आइये।" कहते

हुए अलीबाबा ने दरवाजा खोला। ड़ाकुओं के सरदार और उसके खच्चरों को अन्दर आने दिया।

अब्दुल्ला नाम के गुलाम ने खच्चरों पर से थैले उतारे और खच्चरों को उस जगह ले गया जहाँ और खच्चर बँधते थे। उनको दाना पानी दिया। मोगियाना ने अतिथियों के लिए फिर खाना बनाया। सरदार के भोजन करने के बाद अलीबाबा ने मोगियाना से कहा-"देखो, हमारे मेहमान को किसी प्रकार की कमी न हो। मैं कल सवेरा होने से पहले ही स्नानागार जाऊँगा। मेरे कपड़े वगैरह अब्दुल्ला को दे देना। मैं जब स्नान करके वापस लौटूँ तो मेरे भोजन के लिए शोरवा आदि बनाकर रखना।" यह कहकर चला गया।

इस बीच सरदार ने बाहर आहाते में पड़े थैलों का ढक्कन हटाकर कहा- "जब मैं खिड़की में से पत्थर फेंकूँ, तब बाहर आना, मत भूलना।" उसने थैलों में बन्द ढाकुओं का नाम ले लेकर कहा।

उसके घर में आते ही मोगियाना ने उसके सोने की जगह देखी। मालिक के कपड़े निकाल कर रखे। अब्दुल्ला से शोरवा बनाने के लिए चूल्हा जलाने के लिए कहा। चूल्हे के जलते ही वह शोरबा बनाने लगी। परन्तु बनाते बनाते दिये में तेल खतम हो गया और वह बुझ गया।

"रसोई पूरी नहीं हुयी है, बीच में दिया बुझ गया है। घर में एक बून्द भी तेल नहीं है। क्या किया जाय?" मोगियाना ने पूछा।

"इस व्यापारी के थैलों में तेल भरा पड़ा है। जा कुछ ले आा। क्या बिगडता हैं?" अब्दुल्ला ने कहा।

(अभी और है)





वर का प्रभाव

एक गाँव में दो स्त्रियों रहा करती थी। उनमें से एक बड़ी पैसेवाली थी पर कञ्जूस थी। उसका हृदय भी बहुत कठिन था। दूसरी स्त्री बहुत गरीब थी। पर बहुत अच्छी थी। उसका हृदय मक्खन की तरह था।

दोनों स्त्रियों के घर एक दूसरे से सटे हुए थे।

एक दिन शाम को एक भिखारी उस गली से जा रहा था। जाते जाते उसने पैसेवाली स्त्री के घर का किवाड़ खटखटाया। उस स्त्री ने किवाड़ खोला और भिखारी को खड़ा देखकर फिर एकदम बन्द कर दिया। उसके मुख से इतना भी नहीं निकला-"जाओ और कहीं देखो!"

दो चार कदम आगे बढ़कर भिखारी ने गरीब स्त्री के घर के दरवाजे को खटखटाया।

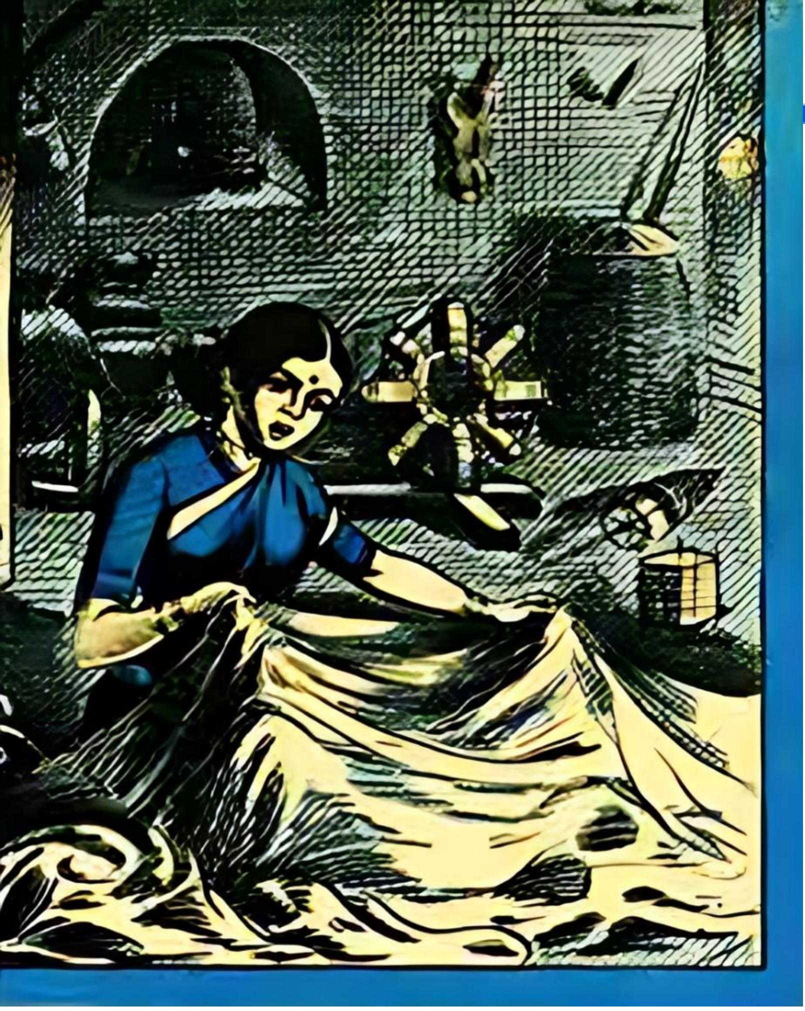
उसने दरवाजा खोलकर भिखारी को देखा। यद्यपि उसका पेट ही नहीं भरा था, तो भी उसने अन्दर जाकर एक रोटी का टुकड़ा लाकर भिखारी को देकर कहा-"यह खाकर जरा मट्ठा पी लेना। देरी हो रही है, चाहते हो तो यहाँ सो जाओ। आराम करो।"

भिखारी ने रोटी खाकर मट्ठा पिया। "माई, मुझे जाना है, बिना तकलीफ के गुजारा हो रहा है न?" उसने उस स्त्री से पूछा।

"मुझे अधिक क्या चाहिये? सब ठीक तरह चल ही रहा है।" उस गरीब स्त्री ने कहा।

"जो देते हैं, उनको भगवान देते हैं, जो काम सवेरे शुरू करो उसे शाम तक करते रहो। फिर देखना।" यह कहकर भिखारी अपने रास्ते चला गया।

गीता देवी



वह यह न समझ सकी कि उसने यों क्यों कहा था? वह उसकी बात तभी भूल गई थी।

अगले दिन उसने बिस्तरे पर से उठते ही यह जानना चाहा कि उसके पास कितना कपड़ा बाकी रहगया था। कपड़ा वही था जो उसने अपने काते हुए सूत से बनवाया था। उसे बेचकर वह जरूरी खर्च के लिए पैसा कमा लेती थी। यही उसकी रोजी थी।

उसने सन्दूक में से कपड़ा निकाला। वह हाथ से मापने लगी। 'एक, दो" वह मापती गई और कपड़ा भी आता गया। "जो काम सवेरे शुरू करो, उसे शाम तक करते जाओ।" भिखारी की कही हुयी बात तब उसको यकायक समझ में आई।

उस दिन शाम होने से पहले उसने हजारों गज कपड़ा लपेट कर रख दिया। कपड़ा सारे घर में बहुत ऊपर तक भर गया।

गाँव में तो कोई बात छुपती ही नहीं। अगले दिन सवेरे गाँव वाले उसके घर आकर मक्खियों की तरह भिनभिनाने लगे। हर कोई चार पाँच गज कपड़ा खरीद कर ले गया। गाँव में सबको बेचने के बाद भी गरीब स्त्री के घर में इतना कपड़ा बच गया कि वह उसकी सारी जिन्दगी के लिए काफी था।

गाँव में यह बात भी फैल गई कि कैसे भिखारी ने आशीर्वाद दिया था। यह सुनते ही पड़ोस की स्त्री ईर्ष्या से जलने लगी। सुन्दर मौका खोने के कारण उसे इतना दुख हुआ कि वह पागल सी हो गई।

तीन दिन बीत जाने के बाद किसी ने उस पैसेवाली स्त्री का घर खटखटाया।

उसने जब किवाड़ खोला तो उसके सामने वही भिखारी था।

"अरे भाई आ गये? आओ अन्दर आओ। उस दिन तेरी आवभगत न कर सकी। एक दो काम हो तो कोई बात भी है, मुझे ही सारे काम करने पड़ते हैं। उस दिन मैं इस कदर ऊबी हुयी थी कि कुछ न पूछो। गाय खूण्टी से खुल गई और सारे पौधे पत्ते हजम कर गई। और मैं तेरा ख़याल न कर सकी।" धनी स्त्री उससे बड़े प्रेम से बातें करने लगी।

वह प्रेम इसलिए दिखा रही थी ताकि वह उसे भी वही वर दे, जो गरीब स्त्री को दिया था।

भिखारी को अन्दर ले जाकर उसने कई शाक-सब्जियों के साथ उसे भोजन परोसा। खीर भी दी। उसके भोजन करने के बाद उसने कहा- "इस रात में कहाँ जाओगे। पलङ्ग है, उस पर गद्दा डाले देती हूँ। उस पर सो जाओ। जरूरत हो तो एक शाल भी है।"

परन्तु भिखारी ने कहा-"जाना है।" उसने जाते हुए कहा-"जो काम सवेरे शुरू करोगी, वह शाम तक खतम न कर सकोगी।" यह आशीर्वाद देकर वह अपने रास्ते पर चला गया।



धनी स्त्री के सन्तोष की सीमा न थी। उस दिन रात को वह न सोई। सवेरे होते ही क्या करने से अधिक से अधिक लाभ होगा, यह ही सोचती रही। कुछ निर्णय न कर सकी। मक्खन निकाला तो मनों मक्खन निकलेगा। पर दिन भर मक्खन ही निकालती रही तो हाथ दुखने लगेंगे। इसलिए उसमें कोई फायदा नहीं। फिजूल की मेहनत।

आखिर उसे एक अच्छी सूझ सूझी। उसके सन्दूक में चार मुहरें थीं। उनको

निकालना शुरू कर दूँगी, शाम तक लाखों, करोड़ों मुहरें जमा हो जायेंगी। उसके बाद उसके समान धनी इस संसार में कोई न होगा।

इस सूझ में वह ऐसी उलझी कि वह ऊँघी भी नहीं। पूर्व की ओर एकटक लगाये देखती रही कि कब सवेरा होता है। आखिर मुर्गों ने बाँग दी। सवेरा हो गया।

अमीर स्त्री अपने पलङ्ग पर से उठकर अपने सन्दूक के पास गई। उसने एक कदम आगे रखा था कि नहीं कि एक भिण्ड ने आकर उसके गले पर काटा। अमीर स्त्री ने उसे मारा तो वह उड़ गया। वह गुस्से में उसे भगाने लगी। इतने में एक और भिण्ड ने आकर डङ्क मारा।

भिखारी का आशीर्वाद सच निकला। उसे दिन भर भिण्ड काटते रहे। और वह उन्हें भगाती रही। लाखों भिण्ड जाने कहाँ से आये। उस अमीर स्त्री का घर भिण्ड़ों से भर गया। वह पगला गई। वह अपने को भिण्ड़ों से न बचा सकी।

शाम होते होते यह बात सारे गाँव में फैल गई। अमीर स्त्री का वर किस तरह पूरा हुआ था यह देखने के लिए गाँव के सब स्त्री पुरुष, बच्चे, बूढ़े आये।

अमीर स्त्री ने जिस तरह पिछली रात बिताई थी, उसी तरह यह दिन बिताया। उसे बड़े कष्ट हुआ।

आखिर सूर्य छुपा। भिण्ड जैसे आये थे वैसे चले गये। ग्रामवासी भी चले गये।

उस दिन के बाद अमीर स्त्री इतनी शर्मिन्दा हुयी कि वह उस गाँव में न रह सकी। उस दिन रात को अपना सारा समान लेकर वह कहीं और चली गई।





[५]

[राजकुमारी बुदूर को देखकर अलादीन उससे प्रेम करने लगा था। उसकी तरफ से उसकी माँ राजा से मिलने गई। उसने उसे वे रत्न भेंट में दिये जो अलादीन गुफा से लाया था और कहा कि उसका लड़का राजकुमारो से विवाह करना चाहता था। रत्नों को देखकर राजा भौचक्का रहगया। वह शादी के लिए मान गया। मन्त्री ने कहा कि शादी तीन महीने तक स्थगित कर दी जाय। दो महीने गुजर गये। एक दिन अलादीन की माँ बाजार गई। बाजार सजाया गया था। उसको मालूम हुआ कि उस दिन राजकुमारी का विवाह मन्त्री के लड़के के साथ हो रहा था।]

उसने घर आते ही अलादीन से कहा-"बेटा! अशुभ वार्ता लायी हूँ।"

"क्या खबर हे माँ?" अलादीन ने उत्कण्ठापूर्वक पूछा।

"क्या कहूँ बेटा! राजा ने तुझे जो वचन दिया था, वह न निभाया। वे अपनी लड़की की शादी मन्त्री के लड़के के साथ कर रहे हैं। आज रात ही मुहूर्त है। मैं तो बहुत दिनों से सोचती आई थी कि मन्त्री जरूर कोई साजिश कर रहा होगा।" माँ ने कहा।

"तझे इस शादी के बारे में मालूम कैसे हुआ?" अलादीन ने पूछा।

उसने नगर में जो कुछ देखा था, सुना था उससे कह दिया। वह सुन अलादीन एक क्षण तो हक्काबक्का रह गया। परन्तु तुरन्त उसे अद्‍भुत दीप की याद आई।

"क्यों फिक्र करती हो माँ! आज यह शादी नहीं होगी। तुम उठो, रसोई करो। खाना खाकर मैं इस शादी को भङ्ग करने की कोशिश करूँगा।" अलादीन ने माँ से कहा।

भोजन करके वह अपने कमरे में चला गया और अन्दर से किवाड़ बन्द कर लिये। दीप को लेकर उसने उसे रगड़ा। तुरन्त भूत प्रत्यक्ष हुआ। "क्या आज्ञा है?" उसने पूछा।

"सुन! राजा ने अपनी लड़की की शादी मुझ से करने का वचन दिया था। उसने तीन महीने की अवधि माँगी। अभी वह खतम न हुयी थी कि वह लड़की की शादी आज रात को मन्त्री के लड़के से कर रहा है। इसलिए तुम दुल्हा और दुल्हन को लाकर मेरे सामने पेश करो।" अलादीन ने भूत को आज्ञा दी।

थोड़ी देर में भूत ने दुल्हे और दुल्हन को अलादीन के सामने लाकर



रखा। "और क्या आज्ञा है?" उसने पूछा।

अलादीन ने मन्त्री के लड़के को दिखाते हुए कहा-"इस अभागे को ले जाकर कूड़े कर्कट के ढेर पर सुलाओ। कल सवेरे फिर मुझे दिखाई देना।"

भूत और मन्त्री का लड़का जब चले गये तो अलादीन ने राजकुमारी की ओर मुड़कर कहा-"मैंने तुम्हें धोखा देने के लिए यहाँ नहीं बुलाया है। तुम्हारे पिता ने ही मुझे धोखा दिया है। उन्होंने वचन दिया था कि वे तुम्हारी शादी मुझ से करेंगे, इसके

लिए तीन महीने की अवधि भी माँगी, परन्तु उस अवधि के समाप्त होने से पहले उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा भङ्ग की और तेरी शादी मन्त्री के लड़के से करने की सोच रहे हैं। इसलिये मुझे यह करना पड़ा।"

शादी के लिए जो सजी धजी राजमहल में एक अलंकृत कमरे में बैठी थी, वह राजकुमारी एक झोपड़ी में आने के कारण घबरा गई। और अलादीन की बातों ने तो उसे और भी घबरा दिया। उस भय के कारण उसने रात भर आखें बन्द न कीं। अलादीन ने उसको अपने बिस्तर पर लिटाया और अपने और राजकुमारी के बीच एक तलवार रखकर वह सो गया।

सवेरे दीप का भूत बिना किसी के बुलाये वहाँ आ गया। अलादीन ने उसे आज्ञा दी कि राजकुमारी और मन्त्री के लड़के को फिर राजमहल ले जाये।

अगले क्षण राजकुमारी और मन्त्री का लड़का राजमहल में थे। वे इतना भी न जान सके कि उनको वहाँ कौन लाया था। राजा ने अपनी लड़की को बुलाकर पूछा-"क्यों बेटी! तुम्हें पति पसन्द है न?" राजकुमारी हैरान हो कर पिता



की ओर देखती रही, पर उसने कोई जवाब न दिया। राजा ने यह प्रश्न दो तीन बार पूछा। पर उसने कोई उत्तर न दिया।

राजा गुस्से में रानी के पास गया। उसने पूछा-"मैंने बेटी से पूछा कि उसको पति पसन्द हैं कि नहीं। उसने कोई जवाब न दिया। क्या बात है?"

"आपसे कहते शर्मा रही होगी। ठहरिये, मैं उससे पूछ कर आती हूँ।" रानी ने कहा।

राजकुमारी ने रानी के प्रश्नों का भी पहले उत्तर न दिया।

रानी ने घवारा कर पूछा-"क्यों, क्या बात है बेटी? क्यों नहीं जवाब देती हो?"

यह सुन राजकुमारी ने कहा-"क्या बताऊँ माँ! मैंने पति के कमरे में पैर रखा ही था कि कोई हमें उठाकर एक घर में ले गया। वह कौन था, यह जानने के लिए भी समय न था। फिर मुझे अकेला छोड़कर मेरे पति को कहीं ले गये। मेरी बगल में कोई नौजवान लेटा हुआ था। हम दोनों के बीच एक तलवार थी। मैं डर के मारे मर-सी गई। सवेरे होते ही हम दोनों यहाँ थे।





इसलिए जब पिता जी ने पूछा तो मैं कोई जवाब न दे सकी।"

"कोई बात नहीं, अगर तूने यह किसी से कहा तो लोग समझेंगे कि तेरी अक्ल मारी गई हैं। अच्छा ही हुआ कि तूने अपने पिता से कुछ नहीं कहा। उनसे कुछ न कहना।" रानी ने कहा।

"माँ, मेरी अक्ल नहीं मारी गई है। जो कुछ मैंने कहा है, वह सच है। अगर तुम्हें मेरी बातों पर विश्वास नहीं है तो मेरे पति से ही पूछकर देखो।" राजकुमारी ने कहा।

"बेटी। तुझे कुछ बहम-सा हो गया है। वह सब भूल जाओ। तेरे विवाह के अवसर पर कैसे खुशियाँ मनाई जा रही हैं! तैयार हो, आ, देखें।" कहते हुए रानी ने दासियों को बुलाकर राजकुमारी को सजाने के लिए कहा।

इस बीच रानी ने राजा के पास जाकर कहा-"लगता है बेटी ने रात को नींद में बुरे सपने देखे हैं। और कुछ नहीं।"

फिर उसने बिना किसी को कुछ बताये, मन्त्री के लड़के को बुलवाया। और राजकुमारी ने जो कुछ कहा था वह सब सुनाकर पूछा-"क्या ऐसा हुआ था?"

अगर वह यह कहता कि यह सच है तो सब उसकी हँसी उड़ाते। इसलिये उसने कहा कि वह झूठ था। रानी ने निश्चय कर लिया कि हो न हो उसकी लड़की ने बुरे सपने देखे थे। दिन भर कोई न कोई मनोरञ्जन कार्यक्रम चलता रहा। पर राजकुमारी ने उसमें कोई उत्साह न दिखाया।

उस दिन अलादीन शहर में घूमता रहा और मनोरञ्जन के कार्यक्रम को देखता रहा। "मन्त्री के लड़के का भाग्य है, वह

राजा का दामाद बन गया है।" जब सब कह रहे थे तो वह अपनी हँसी न रोक सका।

दूसरी रात भी भूत द्वारा अलादीन ने राजकुमारी को अपने घर बुलवाया और बीच में तलवार रखकर दोनों एक ही पलङ्ग पर सोये। भूत ने मन्त्री के लड़के को कूड़े कर्कट के ढेर पर सुलाया। सवेरे होते ही उन्हें राजमहल पहुँचा दिया।

राजा ने अपनी लड़की के पास जाकर पूछा-"बेटी! क्या हालचाल है?" किन्तु राजकुमारी ने कोई उत्तर न दिया, राजा को गुस्सा आ गया। "जो पूछता हूँ उसका जवाब क्यों नहीं देती? देख, मैं क्या करता हूँ।" राजा ने अपनी तलवार निकाली।

राजकुमारी डर गई। उसने आँसू बहाते हुए कहा-"पिता जी! अगर आपको सच मालूम हो गया तो आप मुझपर तलवार नहीं निकालेंगे, तरस खायेंगे।" उसने जो कुछ गुजरा था, कह सुनाया। "यह सब दुल्हा भी जानते हैं। अगर मेरी बात पर यकीन न हो तो उनसे पूछकर देखिये।"



राजा को अपनी लड़की पर दया आई। "पगली! अगर तुमने यह कल कहा होता तो मैं पहरेदार रखवा देता और तुम्हारा कोई कुछ न बिगाड़ता। आज रात को तेरा कोई कुछ न कर सकेगा। मैं सब प्रबन्ध करवा दूँगा।"

फिर राजा ने मन्त्री को बुलाकर पूछा "यह सब क्या है? क्या तुम्हारे लड़के ने तुमसे नहीं कहा कि दो दिनों से रात में क्या हो रहा है?"

"महाराज! मैं दो दिनों से, अपने लड़के से मिल ही न सका। मुझे कुछ नहीं मालूम है।" मन्त्री ने कहा।

राजा ने वे सब बातें मन्त्री को भी बताई, जो उसकी लड़की ने उसे सुनाई थीं। "आखिर हुआ क्या है, यह तुम अपने लड़के से मालूम करो।"

मन्त्री ने अपने लड़के को बुलवाया राजकुमारी का बताया हुआ वृत्तान्त सुना कर पूछा-"क्या यह सच है?"

"राजकुमारी मला झूठ क्यों कहे? मेरी हालत तो और भी बुरी है। मैं दो रात कूड़े कर्कट के ढेर पर सोया। ठण्ड के मारे हड्डियाँ भी जम गई। में यह शादी नहीं चाहता। मेरी यह शादी रद्द करवा दो, पिता जी! भले ही मैं राजा का दामाद न बनूँ मैं एक और रात कूड़े कर्कट के ढेर पर नहीं सो सकता।" मन्त्री के लड़के ने कहा।

यह सुन मन्त्री को बहुत दुख हुआ। इस विवाह के लिए उसने जी तोड़ प्रयत्न किया था। इसलिए उसने अपने लड़के से कहा-"बेटा! तुम जल्दबाजी न करो। आज रात देखें क्या होता है! इस तरह का भाग्य फिर नहीं मिलेगा।"

मन्त्री ने उसके बाद राजा के पास जाकर कहा-"महाप्रभु! राजकुमारी ने जो कुछ कहा है, वह बिल्कुल ठीक है। मेरे लड़के ने भी यही कहा है।"

"यह बात है तो मैं अभी यहाँ शादी रद्द करता हूँ।" राजा ने आज्ञा दी कि शादी की खुशियाँ न हो।

जनता को जब मालूम हुआ कि विवाह रद्द हो गया है तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने मन्त्री और उसके लड़के को राजमहल से गुस्से में जाता देख पूछना शुरू किया-"क्या बात है? क्या हो गया है?" पर बात क्या थी सिवाय अलादीन के कोई न जानता था।

(अभी और है)





कछुए का गर्व

एक दिन जङ्गल में भोज लगा। उस दिन सब जन्तु आपस की शत्रुता भूल, एक जगह इकट्ठे हुये।

एक तरफ बड़ी बड़ी भट्टियों पर बड़े बड़े बर्तनों में कुछ पक रहा था। कुछ लकड़ियाँ ला रहे थे। कुछ शाक-सब्जियाँ काट रहे थे। कुछ एक जगह इकट्ठा हो गप्पें लगा रहे थे।

बातों बातों में खरगोश ने कहा- "भागने में मेरी कोई बराबरी नहीं कर सकता। तेजी में सब कोई मेरे बाद ही हैं।"

"अक्लमन्दी में मेरे बाद ही किसी और का नम्बर आता है।" लोमड़ी ने कहा।

"बहादुरी में मेरी बराबरी करनेवाला कोई नहीं है।" भेड़िये ने कहा।

भालू ने खखार कर, गला साफ करके कहा-"परन्तु बल और पकड़ में मुझे कोई नहीं हरा सकता।"

कछुए ने कुछ न कहा। वह मुस्कराता रहा।

यह देख भालू ने सोचा कि कछुआ उसे देखकर ही हँस रहा था। "अरे मैं अपने बल की बात कह रहा हूँ और तुझे मखौल सूझी है?" भालू ने कहा।

कछुए ने और जोर से हँसकर कहा- "हँसू नहीं तो और क्या करूँ? मुझसे बाजी लगाकर जब खरगोश अपनी डीङ्ग मार सकता है तो मेरा बल जानते हुये यदि तू शेखी मारता है तो इसमें क्या खराबी है?"

भालू ने आश्चर्य से आखें फाड़कर कहा-"तो तू क्या यह कहता है कि तुझ में मुझ से अधिक बल है?"

श्री सुमन कुमार जोशी

जल में मुझ में जितना बल होता है, उतना यम में भी नहीं होता। तू अकेला तो क्या, सब मिलकर भी मुझे नहीं हरा सकते।" कछुए ने कहा।

"मैं यह अपमान नहीं सह सकता।" भालू ने गुस्से में कहा।

"अभी रसोई नहीं हुई है, आओ हम इस बीच एक बार पञ्जा मिला लें।" कछुए ने कहा।

"एक रस्सी लाकर मेरे पैर में बाँधो, और उसका दूसरा सिरा भालू को दो। मैं पानी में जाकर रस्सी हिलाऊँगा। तब भालू मुझे बाहर खींचने का प्रयत्न करेगा। अगर भालू मुझे निकाल सका तो वह जीतेगा, नहीं तो मैं।" उसने कहा।

एक रस्सी लाकर उसके एक सिरे को कछुओं के पैर में बाँध दिया गया। कछुओ ने दलदल में घुसकर रस्सी को एक बढ़ के पेड़ की जड़ से बांध दिया। फिर उसने रस्सी को हिलाया।

बाहर खड़े भालू ने एक हाथ से रस्सी खींची। रस्सी हिली नहीं। भालू ने दोनों हाथों से खींचा। तब भी कुछ न हुआ। रस्सी को पीठ पर रखकर खींचा, तब भी कोई फायदा न हुआ। भालू के हाथों में छाले पड़ गये। कन्धे पर चोट लग गई। पर कछुआ बाहर न आया।

आखिर भालू बेहोश सा नीचे गिर गया। रस्सी को न हिलता देख कछुए ने रस्सी को अपने पैर में बाँध लिया। फिर दल दल में से आते हुये उसने कहा- "मैं भी जाने क्या समझे बैठा था, तेरा बल भी कोई मामूली नहीं है। तूने इस तरह खींचा कि मैं बाहर आते आते बचा।"

यह सुन भालू का शोक जाता रहा। सब मिलकर भोजन करने गये।





[७]

[रूपधर पितृ लोक गया। वहाँ उसने मृत ग्रीक वीरों को देखा। सङ्केतिक से भविष्य में आने वाले कष्टों के बारे में जाना। रूपधर अपने देश की ओर निकला। मार्ग में नागकन्याओं से बचकर वह सूर्य भगवान के द्वीप में पहुँचा। जब उसके सैनिकों ने शपथ की कि वे पशुओं को न छुयेंगे, रूपधर ने उनको उस द्वीप में उतरने की अनुमति दी। उसके बाद]

ग्रीक अपनी नौका को एक ऐसी जगह ले गये, जो बन्दरगाह-सा जान पड़ता था। वहाँ उन्होंने अपनी नौका बाँध दी। पास ही पीने के पानी का सोता भी था। वे तट पर गये। वहाँ उन्होंने भोजन बनाकर खाया। फिर वे उन साथियों के बारे में, जिन्हें विश्वेसनी ने निगल लिया था, सोचते सो गये।

उस दिन रात को तीसरे पहर तूफ़ान शुरु हुआ। आसमान में घने घने बादल छा गये। दक्षिण दिशा से तेजी से हवा बहने लगी। ग्रीकों ने अपनी नौका बाहर निकालकर एक गुफा में रख दी। रूपधर ने अपने सैनिकों से कहा- "मित्रो, हमारी नौका में हमारे लिए कितनी ही खाने की चीजें आदि,



हैं। इसलिए हमें इस द्वीप के पशुओं के बारे में नहीं सोचना चाहिए। वे सूर्य भगवान के हैं। अगर हमने उनको छुआ तो हम जिन्दा न रहेंगे। मैं तुमको सावधान कर रहा हूँ।"

सैनिक भी यूँ ही मरना न चाहते थे। इसलिए उन्होंने अपने सरदार की आज्ञा का पालन किया। महीने भर तक तुफान चलता रहा। नौका में रखी खाद्य सामग्री खतम हो गई। ग्रीक सैनिकों को भोजन के लिए पक्षियों का शिकार करना पड़ा। मछलियाँ पकड़नी पड़ी। किसी का पेट ठीक तरह न भर रहा था। कपड़े भी चीथड़े हो गये थे।

यह देख, रूपधर ने देवताओं से प्रार्थना करने की ठानी। वह अपने सैनिकों को छोड़कर, द्वीप के अन्दर ऐसी जगह गया, जहाँ तूफान का शोर सुनाई न पड़ता था, उस शान्त प्रदेश में देवताओं की प्रार्थना करता करता वह सो गया।

इस बीच, मायावी ने गुफा में बाकी सैनिकों से कहा-"मित्रो! तुम बहुत निस्सहाय स्थिति में हो। इसलिए मैं एक बात बताता हूँ, सुनो। हर प्राणी हर प्रकार की मृत्यु से डरता है। पर भूख से मरना सबसे खराब है। इसलिए तुम बिल्कुल न हिचको। आओ, जाकर पशुओं को पकड़ लायें। अगर हम कभी इथाका पहुँचे तो वहाँ सूर्य भगवान के लिये एक मन्दिर बनवा देंगे। फिलहाल हम इन पशुओं को लायें, ययाविधि स्वर्ग के देवताओं को बलि दें, फिर उन्हें खाकर अपनी पाण रक्षा करें। अगर तब भी सूर्य भगवान नाराज रहे और देवताओं को हमारी मदद करने से रोका तो हम अभी समुद्र में डूब जायेंगे। हिसाब खतम होगा।

इस निर्जन द्वीप में, भूख से घुट घुटकर मरने से तो उस खारे पानी को पीकर मरना ही अच्छा है।"

मायावी की बातें सुनकर बाकी सैनिक बड़े खुश हुए। वे झट निकले और द्वीप में चरते अच्छे अच्छे पशुओं को चुनकर पकड़ लाये, उनको शास्त्रोक्त रीति से बलि चढ़ाया, फिर उन्होंने उन्हें पकाना शुरु कर दिया।

इतने में रूपधर जागा और अपने सैनिकों से मिलने के लिए निकल पड़ा। वह तट से कुछ दूरी पर ही था कि उसको माँस के पकने की गन्ध आई। वह जान गया कि उसके सैनिक सूर्य भगवान पर अत्याचार कर रहे थे। उसने उन्हें डाँटा डपटा। पर जो होना था, सो हो चुका था। प्रायश्चित करने का भी कोई फायदा न था।

उन्होंने उन पशुओं का माँस छ दिन तक खाया। सातवें दिन तूफान बन्द हो गया। रूपधर और उसके सैनिक अपनी नौका समुद्र में खींचकर ले गये और तुरत यात्रा करने लगे। कुछ देर बाद सूर्य भगवान का द्वीप आँखों से ओझल हो गया। जिस तरफ



देखो, उस तरफ समुद्र और आकाश के अतिरिक्त कुछ न दिखाई देता था।

उस समय आकाश में एक बड़ा काला मेघ दिखाई दिया। पश्चिम की ओर से विनाशकारी प्रलयङ्कर वायु बहने लगी। उसकी चोट से जहाज का मस्तूल उसके पकड़नेवाले के सिर पर गिर पड़ा। वह मर कर समुद्र में गिर गया। उसी समय जहाज पर बिजली गिरी। नौका चकनाचूर हो गई। रूपधर के सब सैनिक समुद्र में जा गिरे। किसी का कुछ पता न था।



परन्तु रूपधर को एक शहतीर मिल गया। उसने उस पर एक खम्भे के सहारे पाल लगा दिया। वह उस पर तैरने लगा। इतने में पश्चिमी हवा बन्द हो गई और दक्षिणी हवा बहने लगी। रूपधर ने सोचा, या तो वह फिर भँवर में फँसेगा नहीं तो विध्वंसिनी राक्षसी का भोजन बनेगा। उसे बड़ा डर लगा। जैसे उसे भय था, सवेरा होते होते उसकी वह तमेड़ उसी जगह आ गई थी, जहाँ भँवर थी। परन्तु सोभाम्यवश वह दोनों खतरों से बच गया।

रूपर नौ दिन इस तरह ही बहता रहा। दसवें दिन रात को वह जगजिये नाम के द्वीप पर जाकर लगा। उस द्वीप में सम्मोहिनी नाम की एक देवी एक गुफा में रहा करती थी। उस गुफा के आस-पास का स्थल बहुत सुन्दर था। गुफा के चारों ओर जङ्गली पेड़ थे उनको घेरे हरे मैदान थे, नाले थे। गुफा के द्वार पर अंगूर की बेलें लटक रही थीं। उन पर अंगूरो के गुच्छे लगे हुए थे। सुन्दर दृश्य था।

रूपधर, जब उस द्वीप के किनारे लड़खड़ा रहा था तो सम्मोहिनी ने उसके पास जाकर उसका स्वागत किया और उसको साथ अपनी गुफा में ले गई। उसको खाने के लिए अच्छी चीजें और पीने के लिए अच्छी शराब दी। खूब आवभगत की। "अगर तुम मेरे पति होकर रहे तो न तुम बूढ़े होगे, न मरोगे ही।" उसने वचन दिया।

उस द्वीप में, उसके बचन का धिक्कार कर, रूपधर कुछ कर भी न सकता था। उसकी इच्छा के अनुसार उसने उससे विवाह किया और उसके साथ उस द्वीप में पाँच साल तक वैवाहिक जीवन बिताया।

पर जैसे जैसे दिन बीतते जाते थे, वैसे वैसे उसकी स्वदेश जाने की इच्छा बढ़ती जाती थी, कम न होती थी। वह दिन भर खोया खोया-सा समुद्र के किनारे बैठा रहता।

सम्मोहिनी भी ताड़ गई कि वह उसको अपने देश के बारे में सोचने से नहीं रोक सकती थी, उसने उससे एक दिन कहा-"तुझे देखकर दया आ रही है। मैंने तुझे भेजने का निश्चय कर लिया है। दुखी मत हो। उठकर पेड़ काटकर तमेड बना ले। तुझे जितनी खाने-पीने की चीजें चाहिये वे सच मे दूँगी। कपड़े दूँगी और अनुकूल हवा भी दूँगी। उनकी सहायता से तुम चले जाओ।"

यह सुनते ही रूपधर पुलकित हो उठा। "इसमें कोई न कोई बात है। नहीं तो तुम इस महासमुद्र को तमेड़ पर बैठ कर पार करने के लिए सलाह न देती। अच्छी नौकायें भी चकनाचूर हो गई हैं। इसलिये जबतक मुझे विश्वास नहीं हो जाता कि तुम अपनी इच्छा से भेज रही हो, मैं यह द्वीप छोड़कर न जाऊँगा। यह मेरा पक्का इरादा है।"



"तुम्हारी बुद्धि बक्र बुद्धि है। इसलिये तुम्हें सन्देह हो रहा है। चाहते हो तो प्रमाण करती हूँ। मैं तुम्हारी मदद करना चाहती हूँ। क्या मेरा दिल पत्थर का है? तुझे देखकर मुझे बड़ा तरस आ रहा है।" सम्मोहिनी ने कहा।

वह उसको अपने गुफा में ले गई। उसको समस्त प्रकार के व्यञ्जन परोसकर भोजन कराया। फिर उसने उससे कहा-"तेरा घर जाना तो अच्छा है। पर जब तुम जान जाओगे कि मार्ग में कितनी कठिनाइयाँ हैं तो तुम मुझे छोड़कर न जाओगे। तुम



अपना निर्णय बदल लोगे। मेरी तो सलाह है कि मृत्यु और बुढ़ापे से बचकर यहीं रह जाओ।"

तब रूपधर ने कहा-"घर लौटने की मेरी तीव्र इच्छा है। सचमुच मैं इस अवसर की प्रतीक्षा में हूँ। इन प्रयत्नों में मैंने कई कष्ट झेले, कई मुसीबतों का सामना किया। अगर इस बार भी मैं आफ़तों में फँस गया, कहीं मैं बेसहारा भी हो गया तो समझूँगा कि एक और मुश्किल से गुज़र रहा हूँ। मुश्किलों की श्रृंखला में से यह भी एक होगी। इससे और कुछ होगा नहीं ना? देखो, मैं बहुत ही सहनशील हूँ।"

दूसरे दिन सबेरे ही सम्मोहिनी ने एक पैनी एक कुल्हाड़ी और बसूला रूपधर को दिये और उसके साथ जङ्गल गयी। वहाँ ऊँचे-ऊँचे पेड़ों का एक समूह था। रूपधर ने बीस पेड़ काटे और उन्हें बसूले से साफ़ करके एक छोटी नौका बनायी। उसके लिए एक पतवार और पाल के एक स्तम्भ का प्रबन्ध किया। पाल के लिए आवश्यक वस्त्र सम्मोहिनी ने दिया। नौका को वह समुद्र में ले आया।

इस काम के होने में चार दिन लगे। पाँचवें दिन सम्मोहिनी ने रूपधर से स्नान करवाया और यात्रा के लिए आवश्यक वस्तुएँ दीं। अब वह नौका में पतवार पकड़कर बैठ गया।

उसके लिए अनुकूल हवा चलने लगी। रात को वह बिल्कुल नहीं सोया। नक्षत्रों के सहारे वह नाव चलाने लगा। जब वह निकल रहा था तब सम्मोहिनी ने उससे कहा था कि याद रखो, जब तुम यात्रा करते रहोगे तब इसका ध्यान रखना कि सप्तमहर्षि तुम्हारे बायें हाथ की तरफ़ रहें।

पन्द्रह दिनों तक समुद्र में यात्रा करने के बाद फिर से आँधी चली। आकाश में घने

बादल छा गये। भयँकर वायु चलने लगी। अन्धेरा हो गया। रूपधर ने सोचा कि मौत पास ही थी।

"मैं कितना अभागा हूँ। जो ट्रॉय नगर में मर गये थे वे मुझ से कितने ही अधिक माग्यवान है। उनकी अन्त्येष्टि क्रिया की गई थी। इस समुद्र में यों मरने से तो यही अच्छा होता कि मैं भी वज्रकाय के साथ मर गया होता।"

पर देवताओं ने उसे तङ्ग करने की ठान रखी थी। हवा की थपेड़ से पतवार उसके हाथ से इस प्रकार निकली, जैसे किसी ने खींच ली हो। रूपधर उस तमेड़ से नीचे गिर गया। क्योंकि उसके कपड़े भीगकर भारी हो गये थे, इसलिये वह जल्दी ऊपर न आ सका। जैसे तैसे उन कपड़ों को छोड़कर, तमेड़ पकड़ कर ऊपर चढ़कर बैठ गया। तमेड़ चक्कर काटने लगी। गेन्द की तरह समुद्र में उछलने लगी। उस समय रक्षकी नाम की एक अप्सरा, पक्षी रूप में, चोञ्च में एक कपड़ा लेकर तमेड़ के पास आकर मँडराई। "रूपधर! तुम मर नहीं सकते। देवता चाहे तुम्हें बहुत तङ्ग करें, पर



वे तुम्हें मार नहीं सकते। तुम घर पहुँच जाओगे। परन्तु यह तमेड़ तेरे लिए निरुपयोगी है। इसलिये इस कपड़े को छाती पर लपेटकर पानी में कूदो। इस तरह करने से तुम डूबोगे नहीं। समुद्र के किनारे पर पहुँच जाओगे।"

रूपधर ने उसकी बातों पर ध्यान न दिया। "मुझ पर और मुसीबतें ढाने के लिए शायद यह एक चाल है। भले ही मस्तूल गिर जाय, पर मैं यह तमेड़ नहीं छोड़ूँगा।" यह सोचकर वह तमेड़ जोर से पकड़कर बैठ गया।

परन्तु तुरन्त एक बड़ी लहर आई और उसने तमेड के टुकड़े टुकड़े कर दिये। उसे सिर्फ एक मोटी-सी लकड़ी मिली। वह उस पर इस तरह चढ़ बैठा जैसे घोड़े पर चढ़ा हो। और पत्नी की दिये हुये कपड़े को छाती पर उसने लपेट लिया। वह पानी पर लेट गया और धीमे धीमे तैरने लगा।

वह उस कालोलित समुद्र में दो दिन तैरता रहा। तीसरे दिन तूफ़ान बन्द हो गया। दूरी पर उसे तट दिखाई दिया। यह सोच कर कि अब बुरे दिन लद गये हैं, वह उत्साहपूर्वक तीर की ओर देखने लगा। वह यह भी जान गया कि उस किनारे पर भी उसकी जान जोखिम में थी। उसे आराम न मिलेगा।

क्यों कि वह किनारा पथरीला था। समुद्र की तरङ्गें उससे टकरा कर झाग हो रही थी। उनका शोर उसे सुनाई पड़ रहा था। अगर लहरों ने उसे उन पत्थरों पर दे मारा तो क्या होगा!

जैसा उसने सोचा था, वही हुआ। एक ऊँची लहर उसको उठाकर बहुत तेजी पत्थरों की ओर ले गई। वह एक पत्थर पर जोर से टकराया। परन्तु जब वह लहर लौटी तो उसे वापिस समुद्र में ले गई। इस खींचातानी में उसके हाथों पर चोट लगी।

इस बार रूपधर ने तीर की ओर तैरना छोड़ दिया, वह उसके किनारे किनारे तैरने लगा। कुछ दूर तैरने के बाद उसे एक नदी का मुहाना दिखाई दिया। उसकी जान में जान आई। उसने नदी से प्रार्थना की कि वह उसकी रक्षा करे। वह किनारे पर आते ही बेहोश गिर गया।

(अभी और है)





कील की कीमत

एक गाँव में एक गरीब नौजवान रहा करता था। उसका नाम था गोबिन्द। उसकी शादी हो चुकी थी। उसके दो बच्चे भी थे। क्योंकि उसके पास कोई जमीन जायदाद न थी इसलिए उसको अपनी मेहनत से उन्हें पालना-पोसना पड़ता था। वह कस्बे तक पैदल जाता, वहाँ जाकर कूली मजदूरी करता और जो कुछ मिलता उससे ज़रूरी चीज़े खरीदकर लाता। गोविन्द की बचत की आदत थी। छुटपन में उसका पिता सदा कहा करता-"बेटा, कभी कभी छोटी चीज़ से भी ज़रूरी काम निकल जाता है।" गोविन्द वह बात न भूला था।

एक दिन जब सड़क से वह जा रहा था तो मन्त्री का लड़का घोड़े पर सवार होकर, बाण की तरह तेज चला आ रहा था। गोविन्द के देखते देखते घोड़े के पाव की नाल की एक कील नीचे गिरी।

"बाबू! नाल की एक कील गिर गई है।" गोबिन्द जोर से चिल्लाया।

मन्त्री के लड़के ने पीछे मुड़कर देखा और लापरवाही से हाथ हिलाते आगे बढ़ता गया। उसे पीछे मुड़कर नाल की कील लेना अपनी इज्जत के खिलाफ लगा। यही नहीं, वह जङ्गल के रास्ते, पगडण्डी से शहर जा रहा था। इसलिए उस कील का होना न होना बराबर था।

परन्तु इस विषय में मन्त्री का लड़का गलती कर रहा था। वह जङ्गल में अभी काफी दूर न गया था कि नाल ढीली होकर गिर गई। अगर उसने गोविन्द से कील ले ली होती तो जैसे तैसे नाल लगा ली होती। परन्तु जब नाल के

धनपाल



न होने पर घोड़ा लङ्ङड़ाने लगा तो उसे उतर कर चलना पड़ा। उसे जङ्गल में अकेला जाता देख चोरों ने उस पर धावा किया, उसका सब कुछ लूट लाटकर उसे पेड़ से बाँध दिया।

इस बीच, गोविन्द कील को अपने पास सम्भालकर रख आगे चल दिया। उसको थोड़ी दूर चलने के बाद एक गाड़ी खड़ी दिखाई दी। एक कील के निकल जाने के कारण पहिया निकल आया था। गाड़ी के पास एक रईस खड़ा था।

उसने गोविन्द को देखते ही पूछा- "क्यों भाई, तुम्हारे पास कोई कील है? मुझे जल्दी शहर जाना है। रास्ते में कहीं कील गिर गई है। और इस बियाबान जङ्गल में कहीं लोहे का टुकड़ा भी नहीं दिखाई देता।"

गोबिन्द ने नाल की कील को पत्थर से पहिये में ठोक दी। पहिया लग गया। रईस को बड़ा सन्तोष हुआ।

"शायद तुम भी शहर जा रहे हो, आओ, गाड़ी में चलें।" रईस ने कहा। वह उसको अपने साथ शहर ले गया। उसके हाथ में उसने एक सोने का सिक्का भी रखा।

सिक्का देखते ही गोविन्द की आँखें बड़ी हो गईं। वह सिक्का उसके परिवार के भरण-पोषण के लिए दो महीने तक काफ़ी था। जो बात उसके पिता ने कभी कही थी अब वह सोलह आने सच निकली। एक नाले की कील ने उसे एक सोने का सिक्का दिलवा दिया था।

गोविन्द ने अपने कुटुम्ब के लिए महीने भर की खाने-पीने की चीजें खरीदी और उन्हें बोरे में रखकर जङ्गल के रास्ते घर

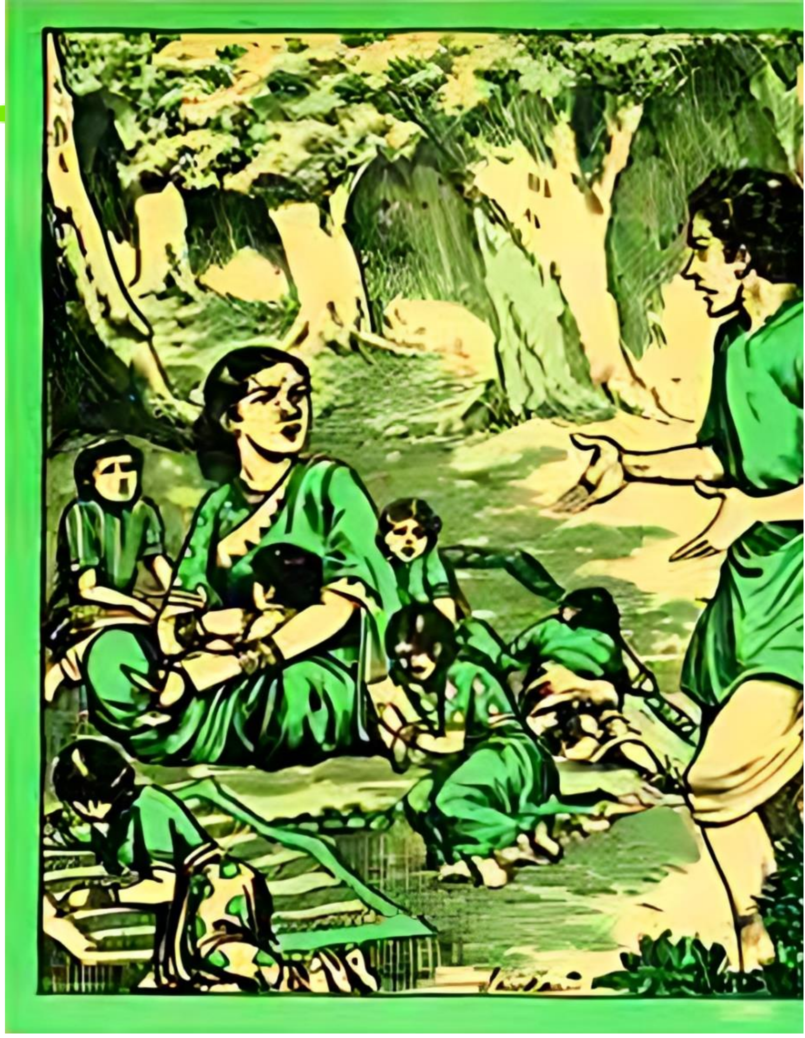
की ओर चल पड़ा। क्योंकि उस रास्ते उसका गाँव नज़दीक पड़ता था।

थोड़ी दूर जाने के बाद, रास्ते के पास के एक पेड़ के पीछे उसे कोई आर्तनाद सुनाई दिया।

गोविन्द अपना बोरा झाड़ियों के पीछे रखकर, पेड़ के पास गया। उसे वहाँ, छः बच्चे और एक स्त्री दिखाई दी। सबकी दयनीय हालत थी। वह स्त्री किसी करोड़पति की भी थी। वे उसके बच्चे थे।

"परसों सवेरे, हम सब जङ्गल में घूमने आये। बच्चे फूलों के लिए जङ्गल में जा घुसे। कहीं वे इधर उधर न भटक जायें, यह सोच मैं भी उनके पीछे गई। इतने में अन्धेरा हो गया और हमें रास्ता न मालूम हुआ। खाया-पिया था नहीं इसलिए हम घूम फिर भी न सके। हम यहीं से चिल्लाने लगे। पर हमारा रोना सुननेवाला कोई न था। आप भगवान की तरह आये हो।" करोड़पति की पत्नी ने कहा।

"डरिये मत। मेरे साथ आइये, मैं रास्ता दिखाऊँगा।" गोविन्द ने कहा।



"हमारी हालत इस समय इतनी खराब है कि हम पैर उठाकर नहीं रख सकते हैं, अब हमें चाहिये मुट्ठी भर अन्न।" उस स्त्री ने कहा।

"तो ठहरिये, अभी मैं आता हूँ।" गोविन्द ने कहा। वह भागकर अपना बोरा ले आया। उसमें कुछ मिठाई वगैरह भी थी, जो वह अपने बच्चों के लिए ले जा रहा था। उसने उसे करोड़पति के बच्चों को दे दी। अपने पास की चीज़ों से वहीं खाना तैयार किया। थोड़ी देर में सबने भोजन किया। वह उनको अपने साथ रास्ते तक लाया। अब मुझे आज्ञा दीजिये।" उसने कहा।

"भाई, हम घर नहीं पहुँच सकेंगे। हमें घर पहुँचाकर जाओ।" करोड़पति की पत्नी ने कहा।

घर पहुँचने पर उसने गोविन्द के हाथ में एक थैली रखी।

गोविन्द ने जब उसको खोलकर देखा तो उसमें आठ सोने की मुहरें थीं। उनको देखकर उसकी आँखें और भी चौंधियाई। उसे सपने में भी न मालूम था कि एक कील उसे इतना धन देगी। उसने कुछ और चीजे खरीदी और उन्हें बोरे में डालकर, जङ्गल के रास्ते घर की ओर चला। जब वह जङ्गल में पहुँचा तो उसे किसी आदमी की कराहट सुनाई पड़ी। वह उस तेरे दिशा की ओर गया, जहाँ से कराहट आ रही थी। उसने मन्त्री के लड़के को पहचान लिया। वह पेड़ से बँधा था और सूखकर काँटा हो गया था।

मन्त्री के लड़के ने कँपती हुई आवाज़ में गोबिन्द को अपनी आपत्ति के बारे में सुनाया। गोविन्द ने उसके बन्धन खोले। उसको चलाता वह अपने घर ले गया। उसे पेट भर खाना खिलाया।

"बाबू, एक नाल की कील के कारण आपका नुक्सान हुआ है और उसके कारण मुझे फायदा हुआ है।" कहते हुए गोविन्द ने अपना किस्सा सुनाया।

सब सुन मन्त्री के लड़के ने कहा- "देख, गोविन्द मुझे ठीक तेरा जैसा आदमी चाहिये, जो मेरी देखभाल कर सके। तुम मेरे साथ शहर चले आओ। ठहरने के लिए बढ़िया घर और अच्छा वेतन दूँगा।"

उस दिन गोविन्द अपने परिवार के साथ शहर चला आया और मन्त्री के लड़के के यहाँ नौकरी करने लगा।



न्याय सब के लिए लिए समान है

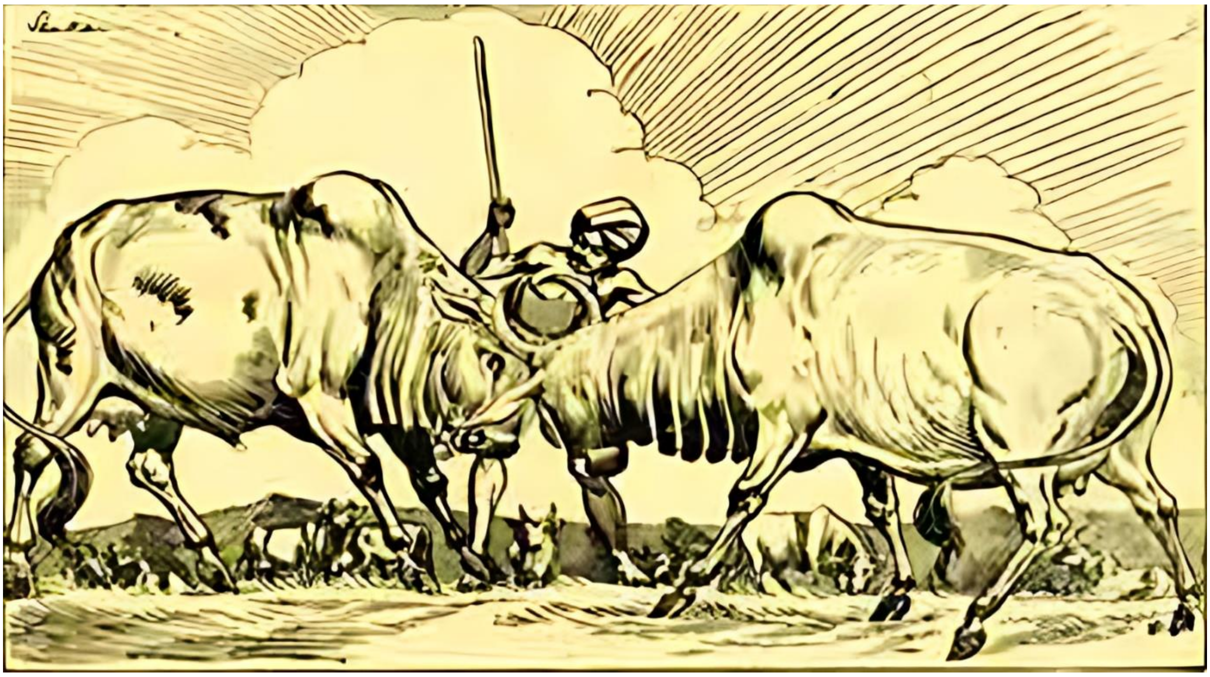
एक गाँव के चौधरी के पास एक पशु-पालक रहा करता था। उसके पास एक अपनी गौ थी। वह मालिक की गौवों के साथ अपनी गौ को भी चराने ले जाया करता था।

एक दिन पशु-पालक की गौ और मालिक की गौ में झगड़ा हुआ दोनों खूब लड़े। पशु-पालक की गौ ने उसके मालिक की गो को मार दिया।

पशु-पालक ने तुरन्त चौधरी के पास जाकर पूछा-"अगर आपकी गौ मेरी गौ से लड़कर उसे मार दे तो उसका क्या हरजाना होगा?"

चौधरी ने झट कहा-"उसका कोई हरजाना नहीं होगा। लड़ना, झगड़ना पशुओं का स्वभाव है। उस बारे में कौन क्या कर सकता है?"

"लगता है, आपने ठीक नहीं सुना है। मेरी गौ ने आपकी गौ को मार दिया है। मुझे डर था कि कहीं आप मुझ से हरजाना माँगेंगे। मैं बच गया।" पशु-पालक ने कहा।





किसी देश में एक गरीब रहा करता था। वह आस-पास के गाँवों में भीख माँग कर गुजर किया करता था। खेतों में जब काम होता तो कूली मजदूर अपने खाने में से थोड़ा बचाकर उसे दिया करते। नहीं तो उसे कुछ न मिला करता। घर घर भीख माँगता तो कुत्ते काटने दौड़ते। कुछ खाने को न मिलता। वह कई दिनों तक भूखा तड़पता रहता।

एक साल उस भिखारी की यही हालत हुई। दो दिन उसने खाना न खाया था। वह एक ग्राम से दूसरे ग्राम के लिए निकला। रास्ते में उसे एक बूढ़ा मिला। "अरे भाई तुम्हारी पीठ पेट एक हो गई है। लो यह चने का दाना लो।" उसने उसे एक चना दिया।

"क्या इससे पेट भर सकेगा?" भिखारी ने पूछा।

"अगर इसे तुम खाओगे तो तुम्हें क्या मिलेगा? यदि यह तुम्हारे पास रहा तो तुम्हें हर कोई आतिथ्य देगा। तब तुझे खाने के लिए दर दर न भटकना पड़ेगा।" बूढ़े ने कहा।

बाद में दोनों अपने अपने रास्ते चले गये। अन्धेरा होने पर भिखारी एक गाँव में पहुँचा। उसने एक घर के सामने खड़े होकर कहा -"थोड़ा खाने को दीजिये।"

तुरन्त घर का मालिक बाहर आया। भिखारी को देखकर वह जान गया कि वह उसके गाँव का न था। उसे अन्दर ले जाकर पेट भर खाना खिलाया।

"आज रात हमारे घर सो सकते हो। इस अन्धेरे में कहाँ जाओगे?" घर के मालिक ने भिखारी से कहा।

भिखारी बड़ा खुश हुआ। उसे कभी, किसी ने इतने आदर के साथ निमन्त्रित न किया था। उसने सोचा कि यह सब उस चने का ही प्रभाव था। उस चने को सिरहाने रखकर वह उस घर के आँगन में आराम से सो गया।

सवेरे सवेरे, घर के मालिक की मुर्गी भिखारी की सोने की जगह आई। उसके किये हुये आवाज के कारण भिखारी उठ गया। परन्तु उतने में मुर्गी उस चने को पकड़कर निगल गई। “अरे! बाप रे बाप, मेरे चने का दाना मुर्गी निगल गई है।" भिखारी जोर जोर से रोने लगा।

घर का मालिक यह सुनकर आया। सारी बात मालूम कर लेने के बाद उसने कहा-"एक चने के दाने के लिए इतना रोते चिल्लाते हो। चाहते हो तो पाव भर चने दूँगा। लेकर चले जाओ।"

"मुझे पाव भर चने नहीं चाहिये। मुझे मेरा चना ही चाहिये। वह भाग्य का चना है। उसे मुझे एक सिद्ध पुरुष ने दिया है।" भिखारी ने कहा।





"पर वह दाना तो मुर्गी के पेट में है। इसलिये यह मुर्गी देता हूँ ले जाओ।" घर के मालिक ने कहा।

यह सोच कर कि मुर्गी को बेचने से शहर में एक डेढ़ रुपया मिल जायेगा, वह उसे लेकर उस ग्राम से निकल पड़ा। वह उस दिन शहर न पहुँच सका। इसलिये उसने एक आदमी के यहाँ आश्रय माँगा। उस आदमी ने देना स्वीकार कर लिया।

भिखारी ने उस दिन भी पेट पर भोजन किया। मुर्गी को बगल में रखकर सो गया। उसकी आँख लगी ही थी कि मुर्गी आँगन में भाग गई और उस घर की मुर्गियों से झगड़ने लगी। बाकी सब मुर्गियाँ एक होकर भिखारी की मुर्गी को भगाने लगी। वह उनसे बचकर एक बछड़े के पाँव के नीचे से भाग रही थी कि बछड़े ने उसे कुचल दिया और वह मर गई।

"बाप रे बाप, मेरी मुर्गा, मेरी सोने की मुर्गी।" भिखारी फिर जोर जोर से रोने लगा। मालिक ने कहा कि वह उसे दो मुर्गियाँ देगा; पर भिखारी न माना। उसने बछड़ा देने के लिए कहा। वह आदमी मान गया, उसने उसे बछड़ा दे दिया। बछड़े को साथ लेकर वह शहर की ओर गया।

जब उसने शहर में पैर रखा तो शाम हो चुकी थी। इसलिये शहर के बाहर एक बड़ा घर देखकर वहाँ प्रवेश किया। उस घरवाले से कहा-"बाबू, मैं बहुत दूर से चला आ रहा हूँ। इस शहर में मेरा जानने पहचानने वाला कोई नहीं है। क्या आज रात आप अपने घर रहने देंगे?" घरवाला मान गया।

उस दिन, उस घर में कोई विशेष बात थी। बहुत से सम्बन्धी आये हुये थे। रात को बहुत बड़ा प्रीति भोज हुआ। भिखारी ने भी उनके साथ पेट भर खाना खाया। उस गड़बड़ी में हर कोई बछड़े को घास-फूस देना भूल गया। रात में बछड़े ने रस्सी खोल ली। घर के मालिक का घोड़ा जहाँ बंधता था, वह वहाँ चला गया, उसका दानी पानी खाने लगा। घोड़े ने बछड़े को दुलत्ती मारी। बछड़ा तड़प तड़प कर वहीं मर गया।

अगले दिन भिखारी घरवाले से लड़ने झगड़ने लगा। घरवाला सीधा-सादा था। घर में आये हुये बन्धुओं के सामने वह किसी पराये आदमी से झगड़ा मोल लेना न चाहता था। इसलिये उसने अपना घोड़ा भिखारी को दे दिया।

भिखारी घोड़े पर सवार होकर दुरवाले शहर की ओर निकल पड़ा। रास्ते में वह सोचने लगा-"अब मेरा भाग्य बदल गया है। बूढ़े का दिया हुआ चना बहुत गजब का था। केवल घोड़े गधों के पाने से क्या फायदा! इस बार अच्छा घर, अच्छी



स्त्री, थोड़ी बहुत जमीन जायदाद भी पानी है। यह घूमना फिरना छोड़कर, एक जगह जम जाना है।"

उस दिन शाम को वह शहर में पहुँचा। जब वह एक गली में जा रहा था तो उसे एक धर्मशाला दिखाई दी। उस धर्मशाला के दरवाजे के पास एक सुन्दर लड़की खडी थी। उसको देखते ही उसने सोचा यदि वह उसकी स्त्री हो सकी तो बहुत अच्छा होगा। इसलिये वह घोड़े से उतरा। धर्मशाला के मुंशी के पास जाकर उसने जगह माँगी। मुंशी ने भिखारी को एक कमरा दिखाया।

भिखारी ने जो लड़की देखी थी, वह उस मुंशी की पुत्री ही थी। सिवाय उसके मुंशी के और कोई सन्तान न थी। अगर उसने उससे विवाह कर लिया तो वह भी उस धर्मशाला में रह सकेगा। घर-बार, स्त्री बाल बच्चे, खाने-पीने की सुबिधाएँ, सब कुछ मिल जायेंगी।" इसलिए भिखारी ने धर्मशाला के कमरे में प्रवेश करते हुए कहा-"बाबू, मेरे घोड़े को जरा देखभाल कर दाना-पानी देना। वह बहुत कीमत का घोड़ा है। मामूली घोड़ा नहीं है।"

क्योंकि उस घोड़े के बारे में उसके मालिक ने इतना कहा था, इसलिए मुंशी स्वयं उसको नाँद के पास ले गया। उसको जबतक पानी पीना था उसने पिया, फिर जब मुंशी जरा ऊँघने लगा तो अन्धेरे में वह बाहर भाग गया। मुंशी ने भिखारी के पास आकर जो कुछ गुज़रा था, कह सुनाया।

भिखारी ने गरमाते हुए कहा-"मैंने पहले ही कहा था न? इतनी लापरवाही! जानते हो इस घोड़े की कितनी कीमत है? उसके लिए जो कुछ मेरे पास था मैंने दे दिया। मेरे घोड़े को मुझे अभी लाकर



दो। मुझे सवेरे होते ही सरकारी काम पर बाहर जाना है।"

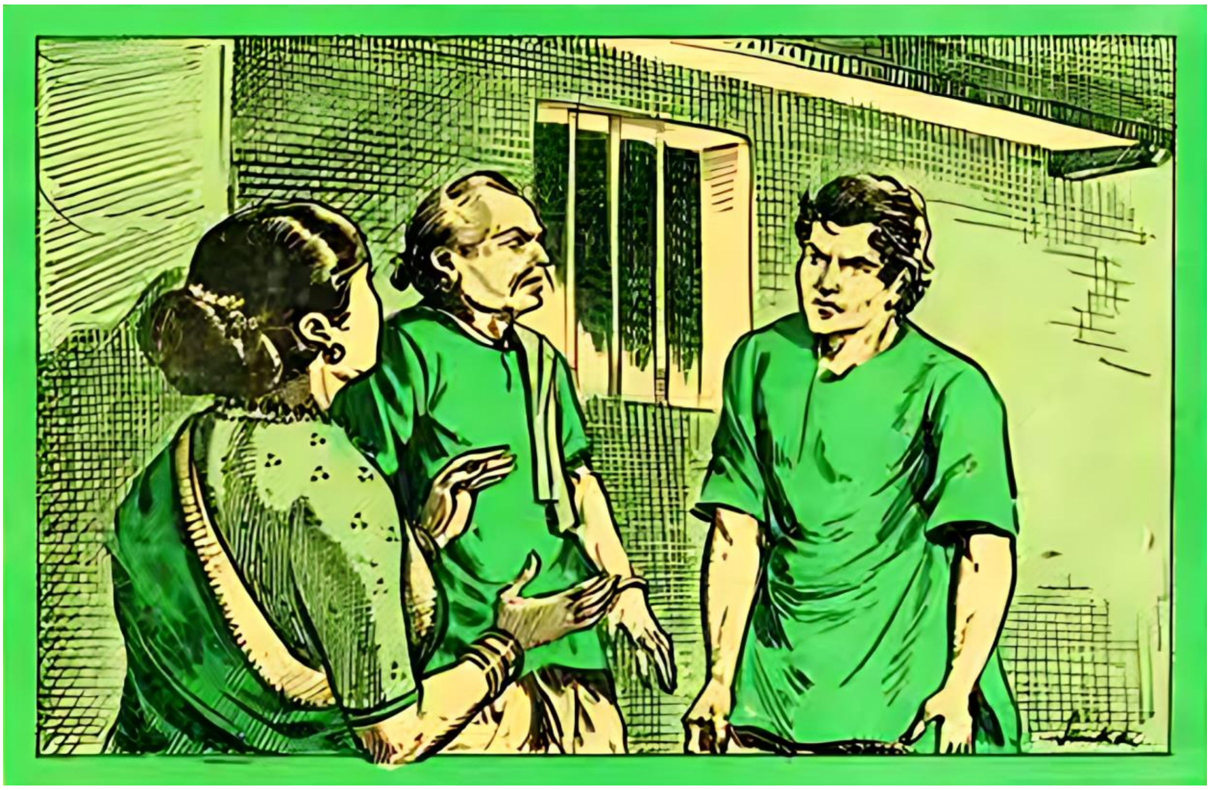
" सवेरा होने दीजिये। मैं जैसे तैसे आपके घोड़े को खोजकर लाऊँगा।" मुंशी ने गिड़गिड़ाते हुए कहा।

"अगर तुम्हें तुम्हारी लड़की न दिखाई दी तो क्या तुम सवेरा होने की इन्तजार करोगे? मुझे मेरा घोड़ा उससे लाखों गुना अधिक प्यारा है।" भिखारी ने गुस्से में कहा।

"तो इस आधी रात में, आप मुझे क्या करने के लिए कहते हैं?" मुंशी ने तङ्ग आकर पूछा।

"मेरा घोड़ा खो दिया है। इसलिए मुझे अपनी लड़की दो और क्या?" भिखारी ने कहा।"

मुंशी को गुस्सा आ गया। दोनों लड़ने झगड़ने लगे। मुंशी की पत्नी ने आकर अपने पति से कहा- "सारी ग़लती आपकी है। आप ठहरिये। अगर लड़की को एतराज न हो तो यहीं कर देते हैं। कभी न कभी किसी न किसी को तो उसे सौंपना ही होगा। अगर चाहेंगे भी तो हमें इससे अच्छा दामाद कहाँ मिलेगा। मैं जाकर लड़की की मर्जी मालूम करती हूँ।



इस बीच आप लड़िये झगड़िये मत।"

भिखारी ने सोचा कि भाग्य साथ दे रहा है। थोड़ी देर बाद मुंशी की पत्नी ने आकर कहा-"बाबू लड़की आप से शादी करने के लिए बिल्कुल नहीं मान रही है। इसलिए मैंने उसे एक बोरे में बाँध दिया है। आप उस बोरे को लेकर अभी चले जाइये। रात में, आप जहाँ भी ले जायें उसे कुछ न मालूम होगा। इसलिए सवेरे आप जब उसे बोरे से बाहर निकालेंगे तो वह वापस न आ सकेगी। तब आप उसे जैसे तैसे शादी के लिए मना लेना।"

भिखारी ने कभी न सोचा था कि ऐसी गुज़रेगी। उसे मुंशी की पत्नी की बात पसन्द आई। अगर उसने पहले लड़की से शादी कर ली तो फिर दोनों धर्मशाला में आकर आराम से रह सकते थे।

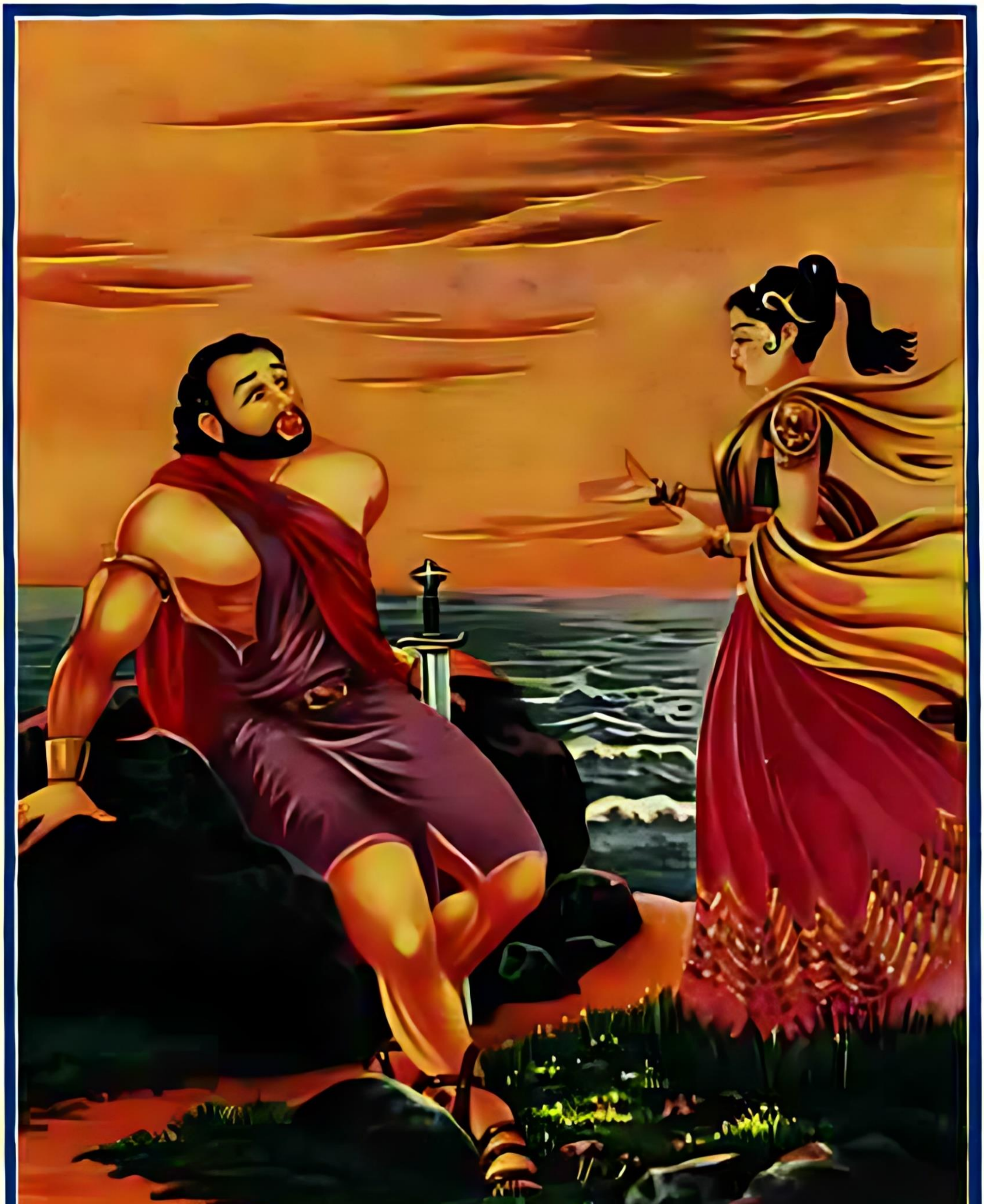
इसलिए बोरा कन्धे पर डालकर वह आधी रात को ही निकल गया। बोरा भारी तो न था; पर अन्दर एक व्यक्ति के इधर उधर हिलने के कारण, उसके लिए उसे उठाना बहुत मुश्किल हो गया। इसके अलावा इतना अन्धेरा था कि हाथ को हाथ न दीखता था। रास्ता भी नया था। जैसे तैसे उस बोरे को रखता, ढोता, रात भर चलकर भिखारी सवेरे एक जङ्गल में पहुँचा।

वहाँ उसने बोरा नीचे रखा। उसने बड़ी आशा से उस बोरे का मुख खोला। उसमें से एक बहुत बड़ा कुत्ता निकला और बिजली की तरह उसकी नाक काटकर भाग गया।

जो भाग्य, चने के दाने के कारण आया था, वह वहीं खतम हो गया। कटे नाक पर हाथ रखकर, भिखारी फिर भीख माँगता जिन्दगी गुज़ारने लगा।



CHANDAMAMA (Hindi) FEBRUARY 1968 Regd. No. M. 8452



रूपधर की यात्राएँ